UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182023

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83
A 48K
Accession No. 2269

Author अमृतल धर

Title कुंचन

This book should be returned on or before the date last marked below.

कंचन

(मौलिक सामाजिक उपन्यास)

अमृत धर

लेखक की अन्य रचनाए

हरिजन, बाबूजी, हरियाली, महात्मा,
"जय-भगिनी, जय-माता"

अमृत बुक कम्पनी
कनाट सरकस, नई देहली

प्रथम प्रकाशित १९५३

सर्वाधिकार लेखक के आधीन

CHECKED 1956

Checked 1965

इस उपन्यास के सभी पात्र एवं घटनायें पूर्णतया मेरी अपनी कल्पना है । ये किसी भी जीवित या मृत व्यक्ति से किसी प्रकार से भी सम्बन्धित नहीं हैं ।

Checked 1969

यू इण्डिया प्रेस, नई देहली द्वारा मुद्रित और अमृत घर नल्ले द्वारा
अमृत बुक कम्पनी, कनाट सरकस, नई देहली से प्रकाशित ।

कंचन और मैं

आज के समाज में मानव का पतन हो गया।

मानव अपने वास्तविक कार्य्य को भूल कर केवल कंचन को अपने घर में ठूँस-ठूँस कर भर लेना चाहता है। उसको पाने के लिए छल, कपट, चोरी, और घोर पाप तक कर बैठता है।

झूठी कंचन को वह पा अवश्य लेता है, परन्तु उसको शान्ति नहीं मिलती। झूठे साधनों द्वारा प्राप्त की हुई कंचन उसके हाथों से उसी प्रकार निकल जाती है जिस प्रकार वह आई थी, और फिर वह उसके लिए मारा-मारा भटकता फिरता है। कंचन को पहचानता नहीं।

ऐसे गिरे हुए समाज को या यूँ कहो कि युग को देखकर मेरा मन शहरों की पक्की सड़कों पर घूमने लगा। जहाँ भी मैं गया, जहाँ भी घूमा, जिस शहर को मैंने देखा, जिस देश को परखा, जिस समाज में मैं गया, सबके मुँह से केवल एक शब्द सुना—कंचन, कंचन, हाय कंचन!

कंचन को पाने के लिए क्या-क्या साधन अपनाये जाते हैं, उनको देखकर मेरा कलेजा मेरे शरीर से बाहर निकल आया, या यूँ कहो कि उल्टा होकर मेरी कलम पर आ गिरा और मैंने अपनी शैली को नमस्कार करके लिखना आरम्भ कर दिया।

मेरी 'कंचन' में उन्हीं विषयों पर, उन्हीं घटनाओं का, और उसी गिरे हुए समाज का वर्णन है जो मैंने स्वयं देखा है, या मैंने सुना है, या मैंने घूम-फिर कर देखा है।

किसी विषय का वर्णन कर देना, या समाज पर कीचड़ उछाल देना, पर अपनी तरफ से उसका कोई उपाय न बताना, मेरी दृष्टि में एक शरीर को बिना आत्मा के घुमाने समान होता है। बिना आत्मा के शरीर चल नहीं सकता; वह सड़ जाता है। उस सड़े हुए शरीर में या

बिगड़े हुए समाज में एक आत्मा डालना, या लोगों के विचारों को एक धधकती हुई ज्वाला से निकाल कर शीतल वायु की ओर ले जाना, यही मेरी पुस्तक 'कंचन' का प्रयास है। अपनी इस रचना में कंचन को वास्तव में मैंने स्त्री का रूप दिया है, क्योंकि इस बिगड़े हुए समाज में, मैंने देखा कि झूठे साधनों द्वारा प्राप्त की हुई कंचन व्यभिचार और मदिरा पर रौंदी जाती है, और वहीं से समाज का पतन आरम्भ हो जाता है।

भारतीय संस्कृति में स्त्री को ही लक्ष्मी माना गया है। स्त्री को ही यह उच्च स्थान दिया गया है। उस महालक्ष्मी, महाशक्ति को अपनाने के लिए, मैंने कंचन की रचना की है। इसमें मुझे कितनी सफलता प्राप्त हुई है, यह मैं क्या कह सकता हूँ ?

अमृत धर

: १ :

एक साठ वर्ष की बुढ़िया जिसके चेहरे पर गहरी झुर्रियाँ चमक रही हैं, बैठी हुई चूल्हे में जोर-जोर से फूंकें मार रही है। लकड़ियाँ गीली होने के कारण धुआँ उड़-उड़ कर उस बुढ़िया की अन्दर धंसी हुई आँखों से बार-बार टकराता जाता है, पर वह बुढ़िया अपनी गालें फुला-फुला कर जोर-जोर से फूंकें मारती ही जाती है और लकड़ियाँ जला रही है।

उसका लड़का प्रभुदयाल अपने कमरे में बैठा हुआ कुछ लिखता ही जा रहा है। विचारों की सामग्री आज टपक-टपक उसके अन्दर आती ही जा रही है और वह उनको जल्दी-जल्दी लिखता जाता है। सुबह सात बजे से ग्यारह बज गये पर वह लिखता ही गया।

मालूम होता है, कोई बहुत बड़ी समस्या को आज वह चीर-फाड़ कर रख देना चाहता है। विचार उसके मन में टपक-टपक कर आ ही रहे थे कि उसकी बुढ़िया माँ रसोई-घर से झुँझला कर उठ खड़ी हुई, और प्रभुदयाल के पास आकर बोली—"क्या हो गया है आज तुझको? न नहाना, न धोना।"

"मैं अभी आया"—प्रभुदयाल जो उस समय विचारों में डूबा हुआ था, बोला।

"अरे भाई, खाने को कुछ नहीं है, खाने को"—माँ बोली।

"तुम जाकर आग जलाओ, मैं एक मिनट में जाकर बाजार से सामान ला देता हूँ।"

माँ ने समझा शायद बेटे की जेब में कुछ रुपये हैं, रसोई-घर में चली गई और आग जलाने लगी।

प्रभुदयाल फिर अपने विचारों में मग्न हो गया। उसकी कहानी के आखिरी पृष्ठ बाकी थे और वह मन ही मन बड़ा प्रसन्न था कि आज उसने एक अच्छी कहानी लिख डाली और हो सकता है, यह कहानी उसकी श्रेष्ठ कहानी मानी जाय।

माँ रसोई-घर में बैठी-बैठी जब उकता गई तो वहीं से ही चिल्ला कर बोली—"अरे, आज उठेगा कि नहीं?"

"उठ रहा हूँ, माँ! आग जल गई?"

"अरे आग तो जल गई, अब क्या उसके साथ मैं भी जल जाऊँ?"

प्रभुदयाल ने यह बात सुनी तो अवश्य, पर अपनी कहानी के आखिरी पृष्ठ लिखने में ही लगा रहा।

माँ ने रसोई-घर में बड़बड़ाना शुरू कर दिया—"बाप ने बड़े-बड़े पोथे लिख दिये पर कुछ न बना, सब ट्रंक में पड़े-पड़े सड़ रहे हैं। एक यह मेरे लिये लड़का छोड़ गया, बाप से भी दस हाथ ऊपर। खाने को घर में कुछ नहीं है पर लगा हुआ है कागज काले करने पर।"

वह यह कहती जाती थी और पास पड़ी हुई रद्दी को अपने हाथ से इधर-उधर हिलाती जा रही थी। चार-पाँच कागज एक जगह उलझे हुए निकले और वह उन्हें पढ़ने लगी, पढ़ती गई और पढ़ती ही गई और फिर धीरे से बोली—"अरे, यह तो मेरे

बेटे की नई पुस्तक के पन्ने हैं" झुँझला कर बेटे से बोल उठी—"सुन रहा है ?"

"हाँ" कमरे से आवाज आई।

"यह देख, तेरी नई पुस्तक रद्दी में मेरे सामने जलने को पड़ी है"—माँ बोली।

प्रभुदयाल यह सुन कर सहम सा गया पर यह समझ कर कि माँ शायद उसे बुलाने का बहाना करती है फिर लिखने में लग गया।

"ले सुन" माँ रसोई-घर से बोली और उसने पढ़ना आरम्भ कर दिया।

प्रभुदयाल अपने कमरे में बैठा ध्यान से सुनता रहा।

माँ ने कहा—"ले अब इसे चूल्हे में डालती हूँ। आग बुझती जा रही है।"

यह बात प्रभुदयाल सहन न कर सका और अपने हाथ से कलम छोड़ कर उठ खड़ा हुआ और रसोई-घर के सामने खड़ा होकर बोला—"इससे पहले तू मुझे क्यों नहीं चूल्हे में जला देती, आग बड़ी अच्छी जलेगी।"

"शुभ-शुभ बोलो बेटा, इसमें मेरा क्या दोष है। दो पैसे की रद्दी ली थी उसमें तेरी पुस्तक भी आ गई।"

"नासमझ बेचने वाला! मूर्ख को जरा समझ न आई। अगर पढ़ने पर कुछ समझ न आई तो उसको फिर पढ़ता और अगर फिर पढ़ने पर भी समझ न आती तो उसको उठा कर अल्मारी में रख देता। एक दिन अवश्य उसे इन कागजों से खुशबू आती।"

"बेटा, पर लोग इतनी देर तक खुशबू का इन्तजार नहीं कर

सकते, उनको तो ऐसी गोली चाहिये जो पेट में जाते ही पेट को बिलकुल साफ़ कर दे।"

"माँ, तू भूलती है! कोई डाक्टर बरसों की बिगड़ी हुई बीमारी को एक गोली देकर ठीक नहीं कर सकता। इसी प्रकार जो संस्कृति, जो देश की आर्थिक अवस्था, जो लोगों के रस्मो-रिवाज, जो उनके रहने के चाल-चलन सैकड़ों वर्षों से बिगड़ते आ रहे हैं, वह एक महीने या एक दिन या एक मिनट में ठीक नहीं हो सकते। लेखक तो एक त्यागी होता है, जो उसका अनुभव होता है वह वही लिखता है। वह तो बिगड़ी हुई समस्या को ठीक ही करने का प्रयत्न करता है।"

"परन्तु, वह अपनी समस्या को ठीक करने का कोई प्रयत्न नहीं करता। घर में खाने को नहीं है और चल दिये हैं देश की समस्या को ठीक करने। अरे बेटा, कहीं नौकरी कर ले"—माँ ने कहा।

प्रभुदयाल माँ की यह बात सुन कर फूट-फूट कर रोने लगा, और बोला—"अगर तेरे घर में खाने को नहीं है, तो ना दे, खाने को तेरे से मांगता ही कौन है? मैं पानी पीकर ही अपना पेट भर लूँगा पर मैं नौकरी नहीं करूँगा। मैं नौकरी करके अपने को बेचना नहीं चाहता"—यह कह कर प्रभुदयाल घर के दरवाज़े से बाहिर निकल गया और बनिये से जाकर आटा मांगने लगा।

बनिये ने कहा—"लेखक जी महाराज, आटा तो खत्म हो गया है।"

"आटा खत्म हो गया है! क्या मतलब?"

"आटा खत्म हो गया है, यह मतलब कि जहाँ से हम आटा लाते थे, वे बोले पिछले रुपये लाओ पहले, फिर आटा मिलेगा। मैंने कहा भी, भाई अभी ग्राहकों से रुपये आये नहीं, आ जायेंगे

तो दे जाऊँगा, तो वह बोले, तो फिर जब वह रुपये दे जाये तो ले जाना और जनाब, आपने भी······।"

"ठीक है, ठीक है, मैं समझ गया तुम्हारा मतलब" – यह कहकर प्रभुदयाल उसकी दुकान से बाहिर आ गया, पर बनिये की यह सब बातें उसके हृदय में विष-भरे बाणों की तरह लगीं और प्रभुदयाल के दिल में यह आया कि वह कहीं जा कर नदी में डूब कर मर जाय। यह सोचता-सोचता वह एक सब्ज़ी की दुकान पर पहुँच गया। उसकी जेब में सिर्फ़ एक आना पड़ा था, बोला—"भाई, आने के भुट्टे दे दो।"

सब्ज़ी वाले ने चार भुट्टे पकड़ा दिये और प्रभुदयाल उनको अपनी मुट्ठी में दबा कर वहाँ से चल पड़ा।

प्रभुदयाल के कलेजे में आज ज्वाला भड़क रही थी। आकर माँ के सामने उदासी से चारों भुट्टे रख दिये और बोला—"माँ, इनको पानी में उबाल दो।"

माँ समझ गई कि बनिये ने आज आटा नहीं दिया, झट चारों भुट्टे उठा कर पानी की देगची में डाल दिये। थोड़ी देर में भुट्टे उबल गये और माँ उन पर नमक लगा कर एक रकाबी में डाल कर ले आई। दोनों बैठ कर भुट्टे खाने लगे।

प्रभुदयाल अपनी माँ से बोला—

"माँ, मैं आज जा रहा हूँ।"

"कहाँ?" माँ ने पूछा।

"परदेश।"

"परदेश! क्या बेटा कोई नौकरी मिल गई वहाँ?"

"नौकरी तो नहीं मिली पर तू समझ ले नौकरी ही मिल गई" प्रभुदयाल ने कहा।

माँ यह समझकर कि बेटे को नौकरी अवश्य ही मिल गई है

पर वह मुझसे छिपाना चाहता है, बोली—

"बेटा, आज के जमाने में रुपया बहुत बड़ी चीज है, अगर तेरे पास रुपया है तो लोग तेरी लिखी हुई बातें भी मानेंगे।"

"माँ यह मैं जानता हूँ। पर माँ, तू मेरे साथ अन्याय कर रही है। लेखक तो एक तपस्वी होता है, उसको रुपये से क्या मतलब। मैंने तो कभी रुपये की तरफ ध्यान ही नहीं दिया और नाही मैं संसार में रुपया कमाने या अमीर आदमी बनने आया हूँ।"

माँ बेटे की यह बहकी-बहकी बातें सुनकर बोली—

"ठीक है बेटा, ठीक है। लिखना तो तेरा होता ही रहेगा और तू फिर भी लिख सकता है पर बेटा घर का काम-काज भी तो चलाना है।"

"भगवान् रोटी तो सबको देता ही है। पर माँ, यह जो तूने मेरी तपस्या में लात मारी है यह......यह......" रोते हुये कहा प्रभुदयाल ने और फिर अपने आपको सम्भाल कर हँसकर उसने वहाँ का सारा वातावरण बदल दिया और कहने लगा—

"अब मैं यह बता देना चाहता हूँ कि लेखक जब रुपया कमाने की तरफ चले जाते हैं तो वह वो भी कर सकते हैं और माँ, मैं अब तेरे लिए कंचन लेने जा रहा हूँ। कंचन! हाँ माँ, मैं तेरे लिए कंचन लेने जा रहा हूँ!!"

यह कहकर उसने अपनी साठ वर्ष की बुढ़िया माँ को खुशी से उठा लिया और उठाकर कमरे में उछलने लगा और खुशी से चिल्ला-चिल्ला कर उसके कान में कहने लगा—"माँ, तेरे लिये कंचन लेने जा रहा हूँ, कंचन! कंचन!! कंचन!!! कंचन!!!!"

वह कहता जाता था और अपनी माँ को उठाये कमरे में नाचता जाता था। इस प्रकार उसने अपनी सब बातों को माँ की खुशी में बदल दिया।

: २ :

रात करवटें बदलते-बदलते कट गई। प्रभुदयाल के मन में केवल एक ही विचार था। उसने माँ के लिए कंचन लाना है। सुबह होते ही उसने अपनी गठरी बाँधी और माँ को प्रणाम करके स्टेशन पर पहुँच गया। वह गाड़ी पर चढ़े तो कैसे, उसके पास तो प्लेटफार्म लेने के भी पैसे नहीं थे, जेब तो उसकी बिल्कुल खाली थी। बाहर खड़ा हुआ, पीठ पर गठरी लटकाये, एक सहतून के पीछे दबा हुआ वह यह सोच रहा था कि जरा टिकट चैकर की नजर बचे तो वह अन्दर घुस जाये या कोई ऐसा भीड़-भड़क्का आये जिसके साथ वह अन्दर चला जाय और अन्दर आकर बिना टिकट ही गाड़ी में बैठ जाये।

आज उसको यह तुच्छ नहीं लग रहा था; रुपया जो कमाना था।

वह खड़ा हुआ यह सोच ही रहा था की सहसा एक बड़ी मोटर आकर वहाँ खड़ी हो गई और उसके अन्दर से उसका मित्र कुमार निकला। प्रभु को देखते ही बड़े तपाक से उससे मिला।

"हैलो प्रभु, तुम कहाँ?" कुमार ने पूछा।

"यहीं जरा बम्बई जाने का विचार है"—प्रभुदयाल ने कहा।

"ओह! वैरी गुड मैं भी बम्बई ही जा रहा हूँ" कुमार ने कहा।

"तुम बम्बई क्या करने जा रहे हो?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"अरे यार, हमने क्या करना है। जरा बाप नराज हो गये थे या यूँ कहो कि हमसे तंग आ गये थे, कहने लगे आवारा हो गया है, कुछ करता नहीं और कहने लगे निकल जाओ घर से बाहर, अपना कमाओ अपना खाओ। और, फिर बोले यह लो बीस हजार रुपये बम्बई चले जाओ, वहाँ जाकर कुछ व्यापार करो। पर हमने करना-कराना क्या है, रुपया फूँक फाँक कर आ जायेंगे; अच्छा, टिकट ले लिया तुमने ?"

"अभी तो नहीं लिया।"

"अच्छा, यह लो दो सौ रुपये। फर्स्ट क्लास के दो टिकट जल्दी से ले लो, रास्ता अच्छा कट जायेगा। गाड़ी प्लेटफार्म पर आगई है।"

इतनी देर में नौकरों ने सब सामान मोटर से उतार कर रख दिया और प्रभुदयाल फर्स्ट क्लास के दो टिकट लेकर आगया। सामान कुलियों को लदवाकर दोनों दोस्त वहाँ से चल दिये।

प्रभुदयाल ने भी अपनी गठरी एक कुली के सिर पर रख दी और इस तरह से वह खद्दर का सफेद कुर्ता और सफेद धोती पहने हुए अपने फुल सूट वाले दोस्त जिसके मुँह में पाइप था के साथ अकड़-अकड़ कर कदम रखता हुआ जा रहा था।

रास्ते में कुमार प्रभुदयाल से पूछने लगा—"यार ! तुम बम्बई क्या करने जा रहे हो ?"

"कंचन लेने" प्रभुदयाल ने कहा।

"हम तो भाई बम्बई किसी कामिनी की तलाश में जा रहे हैं"—कुमार पाइप का दम खींचते हुये बोला।

"तुम वहाँ कुछ देर ठहरोगे ?" कुमार ने फिर पूछा।

"हो सकता है वहीं रह जाऊँ" प्रभुदयाल ने कहा।

"भाई, मिलते जरूर रहना।"

"जरूर मिलता रहूँगा" प्रभुदयाल ने कहा।

इतनी देर में वे गाड़ी पर पहुँच गये और कुलियों से सामान उतरवाकर गाड़ी में बैठ गये। प्रभुदयाल भी अपनी गठरी सीट के नीचे रखकर अपनी धोती ठीक करता हुआ उसके सामने वाली सीट पर डट कर बैठ गया। थोड़ी देर बाद इधर-उधर की गपशप मारने के बाद कुमार साहब, जो नींद के बहुत प्यारे थे, बिस्तरा खोल कर लेट गये और बोले—"लो भाई दोस्त प्रभु, हम तो मुर्दों से शर्त लगाकर सोने लगे हैं; जरा ध्यान रखना, ऐसा न हो की बम्बई की बजाय काले पानी पहुंच जायें।"

"चिन्ता न करो मित्र, आराम से सो जाओ। बम्बई आने पर मैं तुम्हें जगा दूँगा।"

रात सोते-सोते कट गई और बम्बई आने पर प्रभुदयाल ने अपनी गठरी बांधी और कुमार को उठाकर उसका भी बिस्तर बाँध दिया। दोनों दोस्त सामान उतरवाकर स्टेशन से बाहर आ गये। प्रभुदयाल तो अपनी गठरी सम्भाल कर इधर-उधर हो गया और आहिस्ता से शहर की तरफ बाहर निकल आया।

टैक्सी वालों ने कुमार को चारों तरफ से घेर लिया।

"कहाँ जायेगा सेठ?"

"जहाँ ले चलो" कुमार साहब बोले।

कुमार साहब का यह मजाक सुनकर सब टैक्सी वाले दूसरे मुसाफिरों की तरफ चल दिये पर एक लम्बी मूँछों वाला ड्राइवर वहाँ खड़ा रहा।

"आइये सेठ, हम आपको ले चलेगा" वह ड्राइवर बाला।

"कहाँ ले चलेगा?"

"जहाँ आप कहेंगे।"

"अरे भाई, हम कोई यहाँ तमाशा देखने नहीं आया हम सोने-चाँदी के व्यापारी है; दिल्ली से आया है अच्छे होटल में चलेगा।"

"हम ले चलेगा तुमको सेठ अच्छे से होटल में ।"

"वहाँ मछली मिलती है ?" कुमार ने झट से पूछा। कुमार की बात समझ गया वह लम्बी मूँछों वाला ड्राइवर और अपनी आँखें हिलाता हुआ बोला—"हाँ सेठ, वहाँ जिन्दा मछली भी मिलती है और मरी हुई भी।"

मुस्करा पड़ा कुमार उस लम्बी मूँछों वाले ड्राइवर की बात सुनकर और बोला—"अच्छा, तो रक्खो सामान।"

ड्राइवर ने सब सामान टैक्सी में रख दिया और कुमार साहब को लेकर रायल होटल पहुंच गया।

"आप ठहरिये, मैं अभी होटल में सब इन्तजाम करके आता हूँ।" छोड़कर मोटर में कुमार साहब को चढ़ गया होटल पर वह होटल के मैनेजर के पास पहुँचकर बोला—

"गुड मार्निङ्ग !"

"गुड़ मार्निङ्ग, कैसे आया ?" मैनेजर ने पूछा।

"सोने का व्यापारी लाया हूँ आपके होटल में। कहता जिन्दा और मुर्दा दोनों मछलियाँ चाहियें।"

"कहाँ है वह ?"

"मोटर में बैठा है।"

"ले आओ।"

"खोल दो ऊपर का बहिश्त का कमरा" पास खड़े हुए बे को मैनेजर ने हुक्म दिया।

चार नौकरों ने जाकर शीघ्र ही कमरा खोल दिया और झा झड़कर कमरा साफ कर दिया।

कुमार साहब के आते ही, होटल का मैनेजर कुमार साहब को ऊपर के कमरे में ले गया और बोला—"यह है हजूर का कमरा।" मैनेजर जाने लगा तो कुमार ने उसको पीछे से बुलाया—

"क्या चार्जेज़ हैं आपके इस कमरे के?"

मैनेजर मुस्करा कर बोला—"हजूर फिकर न करें, हमारे होटल में चार्जेज़ बहुत कम हैं।"

"देखो हम व्यापारी हैं, हफ्ते भर तक यहाँ ठहरेंगे। ये लो दो सौ रुपये जमा कर लो" कहकर कुमार साहब ने सौ-सौ के दो नोट मैनेजर के सामने बढ़ा दिये।

मैनेजर ने मुस्कराते हुए नोट जेब में रख लिये और अपने कमरे में आकर उसने तुरन्त ही कामिनी को फोन किया।

"कामिनी, दिल्ली से सोने का व्यापारी आया है, जल्दी पहुँचो।"

"अभी पहुँचती हूँ" कहकर कामिनी ने रिसीवर रख दिया।

मैनेजर ने दो सौ रुपये की रसीद काटी और मेज पर रक्खी घण्टी पर आहिस्ता से हाथ मारा। पास के कमरे में से झट एक छोटे से कद की लड़की कुछ गोरी, कुछ साँवली, पास आकर खड़ी हो गई।

"यह लो रसीद, कमरा नम्बर बहिश्त में दे आओ।"

"कमरा नम्बर बहिश्त!"

"हाँ कमरा नम्बर बहिश्त में ले जाओ, और देखो ध्यान से सभ्यता के साथ, जरा लचकते हुए जाना।"

"कमरा नम्बर बहिश्त" छोकरी ने फिर दोहराया और एक चांदी की रकाबी में रसीद रखकर, अपने मुँह पर पौडर का पफ फेरकर चुपचाप चल पड़ी।

कुमार साहब सोफे पर बैठे, मुँह में पाइप लगाकर दम खींच रहे थे, और मेज पर रक्खी हुई एक फिल्मी पत्रिका में तस्वीरें देख रहे थे।

"गुड मार्निङ्ग, सर!" घुसते हुए कमरे में लड़की ने कहा।

लड़की की आवाज सुनकर कुमार साहिब का पत्रिका से ध्यान हट गया, और लड़की ने झट रकाबी सामने कर दी।

कुमार साहब ने रकाबी में से कागज उठा लिया, देखा तो दो सौ रुपये की रसीद थी।

"इसकी क्या जरूरत थी?" कहा कुमार साहिब ने और आँख उठाकर उस लड़की की तरफ देखा और खाली रकाबी में एक रुपया डाल दिया। छोकरी चली गई।

कुमार साहिब फिर पाइप के दम खींचने लगे और तस्वीरें देखने में लग गये।

थोड़ी देर में दूध से भी सफेद रंग वाली, जिसके रेशम से भी मुलायम बाल गर्दन तक लटकते थे, नीली रेशमी साड़ी पहने हुए, हाथ में मीनू और सोने का पार्कर पैन लिए हुए कामिनी अन्दर दाखिल हुई।

"गुड मार्निङ्ग, जैण्टलमैन!" अन्दर घुसते ही जरा कमर लचका कर कामिनी ने कहा।

आँख उठाकर कुमार साहिब ने जो देखा तो सारे बदन में बिजली-सी दौड़ गई।

"आइये-आइये" कुमार ने कहा।

"शुक्रिया" एक मुस्कराहट के साथ कहा कामिनी ने और बोली—"जनाब, खाने को क्या लाया जाये?"

"खाने को, हाँ हाँ खाने को, अच्छा आपके होटल में क्या-क्या मिलता है?" शरारत के साथ कहा कुमार साहिब ने।

"हमारे होटल में सब कुछ मिलता है। चावल हैं, दाल है, सब्जी, मछली, चिकन, आमलेट, वगैरह-वगैरह।

"अच्छा तो लिखिये—एक प्लेट चावल, एक प्लेट मटर, एक प्लेट तोरी, एक प्लेट दाल, एक प्लेट आलू, होगईं चार सब्जियाँ, लिख लिया आपने ?"

"हाँ लिख लिया।"

"एक प्लेट पकौड़ी, एक प्लेट आमलेट, एक प्लेट समोसा, लिख लिया आपने ?"

"हाँ लिख लिया।"

"क्या लिखा आपने ? हाँ, आप जरा बैठ जायें। अभी तो मेरे मीनू का चौथा हिस्सा भी नहीं हुआ। हाँ हाँ, जरा भगवान् की कृपा से मैं खाता खूब हूँ, सब पच जाता है। क्यों जी, अगर खाऊँ ना तो काम कैसे करूँ, खूब खाऊँगा तभी तो खूब डटकर काम कर सकूँगा; क्यों मैडम, ठीक है ना ?"

"बम्बई जैसे शहर में खूब खाने से ही काम चलते हैं।"

"हाँ-हाँ, आपने बिल्कुल ठीक कहा। अभी तो मेरी मीनू का चौथा हिस्सा भी नहीं हुआ, आप इस तरह खड़े-खड़े थक जायेंगी बैठ जाइये ?"

कामिनी ने भी सोचा यह रईस कोई बहुत बिगड़ा हुआ नजर आता है। झट कुमार के सामने बैठ गई और मेज पर कागज रखकर लिखने लगी।

"अच्छा, क्या लिखा आपने ?"

कामिनी ने सब लिखी हुई चीजें पढ़ कर सुना दीं।

"अच्छा फल लिखे ? एक प्लेट आम, एक प्लेट खरबूजा, एक प्लेट लीची और एक प्लेट में चार संतरे।"

मेज पर गर्दन झुकाये हुए लिखती हुई कामिनी की तरफ कुमार देख रहा था और उसके पास से आती हुई भीनी-भीनी सुगन्ध का आनन्द ले रहा था।

"एक प्लेट चिकन, एक प्लेट आमलेट, और एक बोतल बीयर, और बस।"

"एक बोतल बीयर और बस!" दोहराया कामिनी ने।

"हमें तो एक बोतल ही चाहिए, अगर आप चाहें तो दो लिख सकती हैं।"

"एक बोतल बीयर" कहकर कामिनी कुमार साहब पर आँख फैंककर उठ खड़ी हुई।

"ओहो, सब सामान बेकार!" कुमार बोला।

घबरा गई कामिनी उसकी यह बात सुनकर।

"एक चीज तो भूल ही गया।"

"वह भी लिखा दीजिये।"

"लिखिये दो प्लेट मछली, एक प्लेट मरी हुई और एक प्लेट जिंदा" हंसकर बोला कुमार।

"क्या लिखा आपने?" पूछा कुमार ने।

"दो प्लेट मछली, एक प्लेट मरी हुई और एक प्लेट जिंदा।" कहकर घुमा दी अपनी पीठ कुमार साहब की तरफ और कमरे में सुगन्ध उड़ाती हुई कामिनी बाहर चली गई।

रह गया कुमार वहीं अपना कलेजा थामकर और सब खाने की इन्तजार करने लगा और फिर से फिल्मी पत्रिका की तस्वीरें देखने लग गया।

कामिनी ने आर्डर ले जाकर मैनेजर को दे दिया।

"इतनी सारी चीजें! क्या सब चीजें उसको चाहियें?" मैनेजर ने पूछा।

"हाँ जनाब, सब चीजें जल्दी पहुँचाओ इन्तजार कर रहे हैं वह।"

"खा लेगा क्या वह यह सब ?"

"खाये या फैंके तुम्हें इससे क्या मतलब ? तुम्हारे पास तो दो सौ रुपये पेशगी में पड़े हैं। ना ले तो बैरों से कहकर बाहर निकलवा देना" कहकर कामिनी मोटर में बैठकर चली गई।

मैनेजर ने जल्दी-जल्दी सब चीजें तैयार करने का हुक्म दिया। सब चीजें तैय्यार करके एक-एक मेज पर रख दी गई और मैनेजर साहिब उनको एक-एक करके आर्डर से मिलाने लगे। मिलाते-मिलाते आकर अटक गये, दो प्लेट मछली, एक प्लेट मरी हुई, एक प्लेट जिंदा, यह क्या ? चकरा गया मैनेजर साहिब का दिमाग और बैरों से पूछने लगा—"खाएगा क्या जिन्दा मछली ?"

"मैनेजर साहिब, आपको क्या पता दिल्ली के रईस जिन्दा मछली खा जाते हैं" एक बैरा बोला।

"जिन्दा मछली खा जाते हैं !"

"हाँ मैनेजर साहब, छोटी-छोटी मछलियाँ पकड़ लेते हैं और उनको मजे से खाते रहते हैं, बेचारी तड़पती रहती हैं और वह उनको चूस-चूस कर मारते रहते हैं।"

"अच्छा, तो हम कहाँ से लायें जिन्दा मछली ?" मैनेजर ने पूछा।

"वाह, मैनेजर साहिब, वह जो शीशे के जार में लाल, पीली, हरी, नीली मछलियाँ हैं। जार ले जाकर रख देंगे, जितनी मछलियाँ खायेगा, फी मछली २० रुपये चार्ज कर लेंगे।"

"यह ठीक है, अच्छा बुलाओ चारों लड़कियों को और पहुँचाओ उसके कमरे में सब खाना।"

एक लड़की ट्रे में दो प्लेट लेकर जाती और मेज पर रख

आती, फिर दूसरी जाती और दो प्लेटें रख आती, फिर तीसरी जाती और दो प्लेटें रख आती और फिर चौथी जाती और दो प्लेटें रख आती। इस तरह का चक्कर बनाकर उन्होंने कुमार साहब की मेज खाने से भर दी। आखिर में एक लड़की एक प्लेट में मरी मछली रख गई और कुमार साहिब ने समझा कि सब सामान आ गया, अब बस जिन्दा मछली बाकी है।

वह यह सब सोच ही रहा था और अपना ख्याली पुलाव पका रहा था कि होटल का मैनेजर कमरे में दाखिल हुआ और उसके पीछे एक छोटी-सी लड़की जिन्दा मछलियों का जार उठाये खड़ी थी।

"हुजूर, सब सामान आगया ?" पूछा मैनेजर ने।

"आ गया।"

इतनी देर में वह लड़की जिन्दा मछलियों का जार लेकर मेज के पास आ पहुँची और मैनेजर बोला—"और हजूर, यह है वह जिन्दा मछलियां।"

कड़क पड़ा कुमार। आग बबूला हो गया और बड़े क्रोध में प्लेटों पर हाथ मारकर बोला—"ले जाओ सब सामान वापिस, तुम मेरा मजाक उड़ाते हो।"

कुमार साहब के इस तरह क्रोध और कड़क कर बोलने से उस छोटी लड़की के हाथ से घबरा कर जार गिर पड़ा और सब मछलियाँ वहीं कुमार साहब के सामने तड़प-तड़प कर मर गई।

"ले जाओ सब सामान वापिस; नहीं खायेंगे हम तुम्हारे होटल का खाना।"

मैनेजर बेचारा चुपचाप खड़ा सोच रहा था कि क्या यह सब खाना व्यर्थ जायेगा ?

"हम कहते हैं ले जाओ सब सामान वापिस" और फिर

सौ का नोट निकाल कर मैनेजर की ओर फेंक दिया और बोला—"यह लो इसकी कीमत।"

दंग रह गया मैनेजर उस रईस की बातें देखकर! उसने ऐसा रईस पहले कभी नहीं देखा था कि जो कुछ खाये भी नहीं और रुपये भी झोंक दे।

"हजूर कोई गलती हुई हो तो माफ करें। हजूर, बम्बई शहर में जो चीज उगती है या पैदा होती है सब हमारे होटल में हाजिर की जा सकती है", बोला मैनेजर।

हंस पड़ा कुमार मैनेजर की यह बात सुनकर।

कुमार के हंसने से मैनेजर की जान में जान आई और वह बोला—"जो हजूर हुक्म करें हाजिर किया जायेगा।"

"कहाँ है वह लड़की जो आर्डर लेने आई थी?"

"हजूर, वह तो चली गयी।"

"यह सब चीजें तो हमने उस लड़की के खाने के लिये मंगवाई थीं।"

"हजूर!" रुक-रुक कर मैनेजर फिर बोला—"हजूर, वह तो यहाँ सिर्फ दो घंटे के लिये आती है और हम उसे पचास रुपये रोज देते हैं।"

"मैं उसे सौ रुपये दूँगा, सिर्फ उसे मेरे साथ बैठकर खाना खाना होगा और शराब पीनी होगी, हँसना होगा, और बस..."

"हजूर, तो वह कल आ जायेगी।"

"कल नहीं आज, अभी!" कुमार साहब ने कहा।

"अब तो उसका पता लगाना भी मुश्किल है। आदमी भेज देते हैं सारा दिन वहीं बैठा रहेगा; रात को खाने पर लेकर ही आयेगा।"

"हाँ, रात को खूब अच्छे-अच्छे खाने बनाओ और उसे

बुलवाओ," कहकर कुमार ने सौ का एक और नोट मेज पर फेंक दिया।

मैनेजर ने दोनों नोट मेज पर से उठाकर जेब में रख लिये और बोला—"हुजूर, अब आप खाना खाइये।"

"इतना खाना हम नहीं खा सकते।"

"तो हुजूर हुक्म हो तो होटल में से दो लड़कियाँ भेज दें ?"

हँस पड़ा कुमार और बोला—"जाओ, जल्दी भेजो।"

मैनेजर ने जाकर जल्दी-जल्दी उन चारों में से दो लड़कियों के कपड़े बदलवाये और उनको सजा-धजा कर खाने पर भेज दिया और उन दोनों लड़कियों से कह दिया कि दोनों बेधड़क होकर कुमार की दोनों बगलों में बैठ जाएँ और उसको खूब छेड़ें और मजाक करें। बड़ा बिगड़ा हुआ रईस है; हाँ, हाँ, सोने का व्यापारी है। देखती क्या है?"

दोनों लड़कियाँ, आहिस्ते से जाकर, कुमार की दोनों बगलों में बैठ गईं।

कुमार ने झट से उन दोनों लड़कियों के गले में हाथ डाल दिये।

उछल पड़ीं सोफे से दो फुट ऊँची, वह दोनों!

"खाओ, खाओ," कुमार ने कहा।

और सब खाना खाने लग गये।

कुमार खाता तो जा रहा था, पर उसका ध्यान उस समय कामिनी की तरफ था।

दोनों लड़कियाँ एक दूसरे की तरफ देख कर हंसती रहीं और आहिस्ता-आहिस्ता सब प्लेटें चट कर गई।

"आप भी खायें कुमार साहब, यह आम की प्लेट तो खाइये,' उनमें से एक बोली।

"आम खाने के बाद दूध कौन पिलायेगा ?" दोनों पर आंख फैंक कर बोला कुमार।

दोनों लड़कियाँ एक दूसरे की तरफ देखने लगीं और बोलीं "दूध ! दूध भी हम पिलवा देंगे कुमार साहब—आप खाना तो खाइये," कहकर आमों की प्लेट कुमार साहब के सामने रख दी।

कुमार साहब ने प्लेट में से एक फाँक उठा कर मुँह में रख ली। और दोनों लड़कियों को अपनी बगलों में कस कर बोला—"लाओ, अब दूध पिलाओ।"

"हमें छोड़ो हम होटल से तुम्हें दूध ला देती हैं," वे दोनों बोलीं।

"मैं तो कच्चा दूध पीता हूँ और वह भी बकरी का।"

"हमारे होटल में बकरी का दूध तो नहीं मिलता।"

"तुम्हारे होटल में मिलता ही क्या है ? यह होटल है या ढाबा," कहकर कुमार ने दोनों लड़कियों को अपनी बगलों से बिदा कर दिया और उनसे कहा—"चली जाओ तुम दोनों यहां से।"

दोनों लड़कियाँ उठकर खड़ी हो गईं और फिर हंसकर बोली—"कुमार साहब, यह मछली तो आप ने खाई ही नहीं ?"

"मैं जिन्दा मछलियाँ खाता हूँ।"

"जिन्दा मछलियाँ भी आपके पास आई थी, वह भी आपने नहीं खाई, बेचारी तड़प-तड़प कर मर गई।"

उनकी यह बात सुनकर कुमार को कुछ गुस्सा आ गया और मेज पर से कांटा उठाकर बोला—"भाग जाओ यहाँ से और अपने मैनेजर से जाकर कह दो कि अगर सुबह आर्डर लेने वाली लड़की रात को नहीं आई तो हम यह होटल छोड़कर चले जायेंगे।"

: ३ :

उस रईस की बातें सुनकर, होटल का मैनेजर मोटर लेकर, खुद कामिनी के बंगले में जा पहुंचा।

"कामिनी! कामिनी!! मार डाला एक ही तिरछी नजर से तूने उस रईस को, तुम को वहां न पाकर बड़ा बिगड़ा हम सब पर। कहने लगा यह सब खाना तो मैंने उस लड़की के लिये मंगवाया था जो आर्डर लेने आई थी। कामिनी, आज रात को तुमको वहाँ जरूर चलना होगा।"

"मैं रात को वहाँ नहीं आ सकती," नजर घुमा कर कामिनी ने कहा।

मैनेजर कामिनी की यह बात सुनकर घबरा गया और अपनी जगह से एक फुट और समीप आकर बोला—"कामिनी, यह तू क्या कहती है? बरसों के बाद तो यह मुर्गी हाथ आई है और तू कहती है मैं रात को नहीं आ सकती; काम है। वैसे तो कामिनी, तू हर समय सोने का अंडा देने वाली मुर्गी को खोजती फिरती है और अब जब मुर्गी आ गई है तो तू कहती है कि मैं रात को नहीं आ सकती।"

"मैं कल आ जाऊँगी," कहा कामिनी ने बहाना बनाकर।

"नहीं-नहीं, कामिनी, वह कहता था कि अगर रात को वह लड़की नहीं आई तो मैं यह होटल छोड़ दूँगा। कामिनी, जब मैंने

उससे कहा कि कामिनी डिनर खिलाने के सौ रुपये लेती है तो झट से सौ का नोट निकाल कर फेंक दिया।"

बदल दी नजर मैनेजर की बात सुनकर कामिनी ने और बोली—"अच्छा लाओ, फेंको वह सौ का पत्ता।"

मैनेजर ने झट से सौ का पत्ता कामिनी के सामने रख दिया।

सौ का नोट लेकर कामिनी बोली, "तैय्यार रखना सब शराब की बोतलें और पानी डाल-डाल कर देते जाना।"

"कामिनी, वह बड़ा बिगड़ा हुआ रईस है, फर्श पर तोड़ देगा बोतलें; पहले अच्छी तरह से परख लो।"

"परवाह न करो; जो मैं कहती हूँ करते जाओ। जो-जो शराब मैं कहूँ पानी डाल-डाल कर देते जाना और पूरा बिल साथ-साथ लेते जाना।"

"जैसा तुम हुक्म करो, मंजूर है," कहकर मैनेजर चला गया।

मैनेजर ने आकर सब अच्छे-अच्छे खाने विशेषकर मछलियों जैसी उत्तेजनाजनक चीजें तैयार करवा डालीं।

रात के नौ बजे तो कामिनी ने मुलायम आसमानी रंग की पतली साड़ी निकालकर अपने गोरे-गोरे बदन पर पहनी और बालों पर सुगंधित सेंट लगाकर, होठों पर लिपस्टिक लगा कर, मोटर में बैठ गई।

होटल में जा पहुँची।

कुमार अपने कमरे में दूध से भी सफेद रेशमी डिनर सूट पहन कर एक पत्रिका देख रहा था।

"जहांपनाह, खाना लाया जाय?" कमरे में घुसकर एक लड़की ने पूछा।

"वह लड़की आ गई?"—पूछा कुमार ने।

"आ गई जहांपनाह ।"

संभल कर बैठ गया कुमार सोफे पर, दिल धक्-धक् धौकनी की तरह चलने लगा।

झट से एक पाँच का नोट निकाल कर लड़की के हाथ में दबा दिया और बोला—"पहले उनको आने दो ।"

लड़की सलाम करके चली गयी ।

थोड़ी देर बाद पर्दे को हटाते हुए कामिनी कमरे में दाखिल हुई और कुमार का मुँह दिल की धड़कन से सूख गया उस नूर की परी को देखकर जो पहले दिन से भी सौ गुना सुन्दर लग रही थी आज उसे ।

"आइये, आइये !" कुमार ने अपने को सम्भाल कर कहा।

कामिनी लचकती, मटकती, कमर घुमाती हुई, कुमार के सामने कुर्सी पर बैठ गई। सामने की बत्ती की रोशनी कामिनी की रेशमी साड़ी और गोल-गोल चेहरे पर पड़ रही थी जिसने कामिनी को अति सुन्दर बना दिया था ।

कामिनी का बढ़ा-चढ़ा रूप देखकर कुमार का कलेजा बैठ गया, और वह उसकी तरफ देखता ही रह गया पर उसके मुँह से कुछ न निकला ।

कामिनी समझ गई कि यह बिगड़ा हुआ रईस तो अवश्य है पर दिल का बहुत कमजोर है। झट से बोल उठी—"सुना है, आपने हमें दावत पर बुलाया है ।"

कुमार के मुंह का ताला जैसे कामिनी ने खोल दिया।

कुमार बोला—"हाँ-हाँ, अभी तक वह खाना नहीं आया ?"

"मैं मंगवाती हूँ ।"

कामिनी ने झट से मेज पर रक्खी घण्टी पर आहिस्ता से हाथ मारा और शीघ्र ही एक लड़की वहाँ आ गई ।

"एक डिब्बा गोल्ड फ्लेक," कामिनी ने कहा।

एक लड़की झट प्लेट में गोल्ड फ्लेक का डिब्बा और उसके साथ ही बिल रख कर ले आई।

कामिनी ने गोल्ड फ्लेक का डिब्बा उठा लिया और लड़की ने बिल वाली प्लेट कुमार के सामने कर दी।

कुमार ने झट पांच का नोट रख दिया और साथ ही हाथ हिला दिया जिसका अर्थ था बाकी पैसे लाने की आवश्यकता नहीं।

"गोल्ड फ्लेक के डिब्बे की कीमत तो कम है, आपने तो पाँच का नोट ही दे दिया," कुमार से सहानुभूति दिखाने के लिए कामिनी ने कहा।

"सब ठीक है, कोई फर्क नहीं पडता," कहकर कुमार समझने लगा कि जैसे उसने कामिनी की नजरों में पहली दफा ही दबदबा बिठा दिया।

कामिनी ने अपने बैग में से एक हाथी दाँत का सिगरेट-होल्डर निकाला और उसमें सिगरेट लगा कर पीने लगी।

कुमार साहब ने भी अपना पाइप सुलगाया और दम खींचने लगे।

पाइप का दम खींचते ही जैसे कुमार साहब में मानो नई जान आ गई। बेधड़क पाइप का दम खींचकर अंग्रेजों की तरह बोले—"बड़ी मीठी खूशबू आ रही है आपके पास से।"

"शुक्रिया," एक तिरछी नजर फेंककर कामिनी ने कहा।

कामिनी के मुँह से 'शुक्रिया' का लफ्ज सुनकर कुमार समझ गया कि यह लड़की सब सभ्यता जानती है और फिर शरारत के साथ बोला—"जरा सी खुशबू हम को भी सुंघा दो ?"

कामिनी ने झट अपना गोरा-गोरा हाथ उल्टा करके कुमार के सामने मेज पर रख दिया।

कुमार समझ गया। उसने झट कामिनी का हाथ उठाकर चूम लिया। स्वर्ग में पहुंच गया कुमार कामिनी का हाथ चूमकर। दिल की मुराद पूरी हो गई।

कामिनी तो जानती ही थी की जब तक इस रईस की वासना न सुलगाई जायेगी तब तक यह एक पैसा भी नहीं निकालेगा।

इतनी देर में लड़कियों ने मेज पर खाना लाकर ल[illegible]दिया। दोनों ने आहिस्ता-आहिस्ता, हंस-हंस कर खाना खाया। खाना खाने के बाद दो खूबसूरत गिलासों में एक-एक पैग शराब डालकर एक लड़की ले आई। पैग लेकर कामिनी ने कुमार के सामने रख दिया और बोली, "पीजिये"।

कामिनी ने गिलास हाथ में ले लिया, कुमार ने भी गिलास हाथ में लिया। दोनों ने गिलास छुआ कर पीना शुरू कर दिया।

एक घूंट पीकर कामिनी ने गिलास मेज पर अपने सामने रख दिया; कुमार ने भी गिलास अपने सामने रख लिया।

दोनों एक दूसरे की ओर घूमती हुई नज़रों से देखने लगे। कामिनी ने अपना गिलास उठाकर उसके सामने रख दिया और उसका जूठा शराब का गिलास पीने लगी।

कामिनी की यह हरकत देखकर कुमार फूलकर कुप्पा हो गया। वासना की चिंगारी और भड़क उठी।

दोनों ने शराब के गिलास खाली कर दिये। हो गया कुछ नशा कुमार साहब को।

कामिनी ने झट घण्टी बजाई।

लड़की आई। शैम्पेन मंगवाई कामिनी ने।

दो पैग! आधा पानी, आधी शराब आ गई!!

कुमार शैम्पेन पीते-पीते बोल पड़ा नशे में—"कुरबान जाऊँ, तुमने अपना नाम तो मुझे बताया ही नहीं ?"

"मेरा नाम है कामिनी।"

चौंक पड़ा कुमार 'कामिनी' नाम सुनकर।

"कामिनी," नशे में बोला कुमार, "मिल गई वह चीज मुझे जिस [illegible] तलाश में मैं यहां आया था। कामिनी, तुम्हें मेरी कसम, उठकर यहाँ मेरे पास सोफे पर आ जाओ।"

कामिनी शराब का गिलास हाथ में लेकर कुमार के पास सोफे पर बैठ गई।

"कामिनी, तुम सचमुच कामिनी हो, जिसकी तलाश में मैं यहाँ आया हूँ।"

"आप तो यहाँ सोने का व्यापार करने आये हैं ?"

"नहीं कामिनी, मैं तो यहाँ कामिनी की तलाश में आया हूँ। कंचन की तलाश में तो मेरे दोस्त प्रभुदयाल आये हैं।"

फेंक दी गर्दन कामिनी ने कुमार की गोद में और अपने हाथ से पिलाने लगी कुमार को शराब।

शराब खत्म हो जाती और शराब आ जाती। आधा पानी, आधी शराब। इस प्रकार धीरे-धीरे लड़कियाँ कुमार साहब से दो सौ रुपया ऐंठ कर ले गई।

कामिनी कुमार को असली शराब छोड़ कर, आधा पानी, आधी शराब, देती रही और उसको अपनी आँखों की शराब पिलाती रही।

कुमार कामिनी को पाकर तृप्त हो गया। अब की दफा उस लड़की की लाई हुई शराब को सूंघने लगा तो कामिनी समझ गई कि मेरा नशा अब इस पर से उतर गया है; झट से धमका कर उस

लड़की से बोली—"क्या बार-बार अन्दर आ जाती है, ले जाओ यह दोनों गिलास, पूरी बोतल लाकर रख जाओ।"

लड़की दोनों गिलास वापिस ले गई और पूरी बोतल लाकर रख गई।

"मत आना अन्दर अब तुम," कहा कामिनी ने।

बोतल का मुंह खोलकर, आहिस्ता-आहिस्ता, सारी बोतल कामिनी ने कुमार के अन्दर धकेल दी।

बोतल पीकर कुमार नशे में चूर हो गया और नशे में सोफे पर से नीचे गिर पड़ा और अपने होश-हवास खो बैठा। कामिनी ने देखा शिकार अब आराम करेगा, अपना बटुआ उठाकर कमरे से बाहर हो गई।

मैनेजर के पास आकर बोली—"लाओ, फेंको शराब के रुपये।"

कुमार कामिनी के साथ बैठे-बैठे दो सौ रुपये की शराब पी गया जिसमें आधा पानी, आधी शराब थी। मैनेजर ने झट सौ रुपये निकाल कर दे दिये और कामिनी अपने बटुए में रुपये रखकर चल दी।

होटल वालों ने फर्श पर गिरे, नशे में चूर, कुमार को उठा कर पलंग पर लिटा दिया और देख-भाल के लिए एक लड़की वहां छोड़ दी।

: ४ :

प्रभुदयाल अपनी गठरी पीठ पर लटकाये हुए बम्बई के बाजारों में घूमता रहा ।

शहर में ऊँची-ऊँची बिल्डिगें, दोमंजिला ट्राम्वे, जहाँ भी वह जाता वहीं उसे नजर आती थीं । लम्बी-लम्बी मोटरें कभी-कभी उसके पास से बड़ी तेजी से जब दौड़ती निकल जातीं तो प्रभुदयाल जल्दी से डर कर पीछे हट जाता ।

घूमते-घूमते, देखते-देखते जब वह थक गया तो उसको काम का ध्यान आया । वह एक अखबार के दफ्तर में घुस गया । मैनेजर सामने बैठा हुआ चाय पी रहा था । प्रभुदयाल सीधा उसके कमरे में घुस गया और बोला—"मैनेजर साहब, नमस्ते ।"

मैनेजर साहब एक खद्दर का कुर्त्ता और धोती पहने हुए, पीठ पर गठरी लटकाये हुए, एक आदमी को जिसका माथा छः इंच चौड़ा था, अन्दर घुसा आता देखकर सहम-से गये । वह समझे कि कहीं यह किसी प्रान्त का मन्त्री ना हो, क्योंकि ऐसी एक गलती उनसे पहले एक बार हो चुकी थी ।

एक बार, इसी प्रकार मैले से खद्दर के कपड़े पहने हुए, एक मन्त्री वहाँ आया । मैनेजर साहब अपनी चाय ही पीते रहे और उन्होंने मंत्री की ओर कोई ध्यान नहीं दिया । बाद में उन्हें पता चला कि वह तो किसी प्रान्त का मन्त्री था । इसीलिये झट से

कुर्सी छोड़ कर वह खड़े हो गये और बोले—"आइये, आइये, कैसे आना हुआ ?"

प्रभुदयाल रोनी-सी आवाज़ में बोला—"मैनेजर साहब, नौकरी चाहिये।"

"धत् तेरे की; मैंने समझा था कि कोई मन्त्री होगा, पर तू तो भिखारी निकला," कह कर मैनेजर साहब कुर्सी पर बैठ गये और उससे बोले—"क्या आता है तुझको ?"

"लिखना-पढ़ना सब जानता हूँ; अंग्रेजी आती है, हिन्दी आती है।"

"हमारे यहाँ तो सिर्फ मशीन चलाने वाले की जगह खाली है। तुम्हारे लिये कोई नौकरी नहीं है। चपरासी इन्हें बाहर ले जाओ।"

प्रभुदयाल अपना-सा मुँह ले कर बाहर आ गया।

जिस नौकरी को वह ठुकराया करता था, उसी के लिये वह दर-दर भटकता है और वह उसे नहीं मिलती है। कई दफ्तरों में, दुकानों में उसने नौकरी तलाश की पर सब जगह से उसे निराश ही होना पड़ा। पेट की अग्नि भड़कने लगी, अँतड़ियां तड़फने लगीं, आँखें अन्दर धंसने लगीं, दिमाग चकराने लगा, पर उसको सारे बम्बई शहर में कहीं नौकरी न मिली।

भला नौकरी कहीं एक दिन में मिल जाती है। यह भी कोई भगवान् का दिया हुआ उपहार है जो हवा की तरह है कि घर से बाहर आकर जितनी मर्जी खा ली। ये तो मनुष्य के बनाये हुए पदार्थ हैं। इनको पाने के लिये मनुष्यता ही करनी होती है। प्रभुदयाल को इन बातों का क्या पता। अब प्रभुदयाल की टाँगों में चलने की शक्ति नहीं रही। घूमते-घूमते आँखें आकाश की ओर जा लगीं और एक समस्या उसके सामने घूमने लगी। उस सच्चे लेखक की नाड़ी ने तेज़ फेंका और विचारों की सामग्री घूम-घूम कर

दिमाग में इकट्ठी होने लगी और वह उन विचारों को खाता हुआ वहाँ की लम्बी-लम्बी सड़कों पर गाता हुआ चलने लगा :—

न कोई पैसा न कोई रोटी,
न पैसा देता न रोटी देता।
सब देते हैं गालियाँ,
न कोई पैसा न कोई रोटी।
न पैसा देता न रोटी देता,
'आगे जाओ' 'आगे जाओ',
सब कहते हैं 'आगे जाओ'।
कोई कहता उल्लू का पट्ठा,
कोई कहता मुस्टंडा।
न पैसा देता न रोटी देता,
देते सब हैं गालियाँ ॥

चलते-चलते प्रभुदयाल समुद्र के किनारे एक वृक्ष के नीचे बैठ कर, आकाश की ओर मुँह करके रोने लगा और फिर अलापने लगा :—

"कहाँ गये वह धर्म पुजारी, कहाँ गई वह जीव आत्मायें,
धर्म कर्म का नाम भुला कर, क्या करता है पापी,
पाप की गठरी ले के न आया
क्यों फिर पाप करे हे पापी !"

अब प्रभुदयाल जोर की आवाज में गाने लगा :—

कंचन, कंचन, दुनियाँ पुकारे,
कंचन पाने तू भी आया।
भूल कर सब बातें,
'कंचन' 'कंचन' दुनियाँ पुकारे।

इसके बाद प्रभुदयाल ने फिर वैसे ही गाना शुरू कर दिया:—

न कोई रोटी न कोई पैसा,
न रोटी देता न पैसा देता।

एक मोटा ताजा सेठ अपने आदमियों के साथ समुद्र के किनारे फकीरों को रोटियाँ बाँट रहा था। उसके कान में प्रभु की आवाज़ पहुँची। वह अपने आदमियों से बोला—"जाओ, उस लड़के को बुला लाओ।"

सेठ के आदमी दौड़ कर गये और प्रभु से बोले, "ओ लड़के, सेठ बुलाता है, चल।"

"कौन सेठ बुलाते हैं?" प्रभु ने पूछा।

"वह सेठ जी सामने खड़े रोटियाँ बाँट रहे हैं।"

प्रभु ने जो नजर घुमा कर देखा तो मैदान रोटियों से भरा पड़ा था और सब भिखारियों के हाथों में रोटियाँ पकड़ी हुई थीं। रोटियाँ देख कर दौड़ पड़ा सेठ की तरफ प्रभुदयाल उन दोनों आदमियों को वहीं छोड़ कर, जैसे कोई भूखा शेर शिकार के लिये दौड़ता है।

झिझक कर खड़ा हो गया सेठ के पास आ कर प्रभुदयाल। सेठ ने झट टोकरे में से दो रोटियाँ निकाल कर प्रभुदयाल को दे दीं। प्रभुदयाल ने अपने दोनों हाथ आगे करके, वह दोनों रोटियाँ ले लीं।

"और लेगा?"—पूछा सेठ ने।

"बस, मेरा इन दो रोटियों से ही पेट भर जायगा, बाकी रोटियाँ इन लोगों को दे दो। यह भी मेरी तरह भूखे हैं," कह कर उसने सेठ की तरफ पीठ मोड़ दी।

प्रभुदयाल अपनी जगह पर आ कर रोटियाँ खाने लगा। रोटी खा कर, उसने वहीं चुल्लू-भर कर समुद्र का खारी पानी पीया।

आत्मा को शान्ति आई। जठराग्नि शान्त हो गई। गठरी वहीं उस वृक्ष की कोख में रख कर, प्रभुदयाल फिर शहर की तरफ चल पड़ा। उस समय शाम हो गई थी।

एक बूढ़ा, आँखों से कमजोर, जिसमें अब भागने-दौड़ने की शक्ति नहीं रह गई थी, एक अखबार के दफ्तर के सामने, पटरी पर बैठा हुआ था। चारों तरफ से, दस-बीस छोटे-छोटे लड़कों ने उसको घेर रक्खा था।

छोटे-छोटे लड़के, हाथ बढ़ा-बढ़ा कर, अपने उस बूढ़े मालिक से शाम की खबरों का अखबार ले रहे थे और बेचने के लिये शोर-गुल मचाते, बेचते जाते थे और दौड़ते जाते थे।

प्रभुदयाल भी वहाँ खड़ा हो कर कुछ देर तक यह देखता रहा। रोटियाँ खाने से अब उसमें भी शक्ति आ ही गई थी, झट भीड़ में हाथ बढ़ा कर चीख उठा—"दस पर्चे।" बूढ़े ने यह देखा भी नहीं कि किसका हाथ है। झट उसके हाथ में दस अखबार थमा दिये।

प्रभुदयाल हाथ में अखबार लेकर गोली की तरह सड़कों पर दौड़ने लगा और शोर-गुल मचाने लगा। भूल गया सब कुछ कि वह कोई लेखक है, समा गया उसी वातावरण में जिसमें वे लड़के थे। चीखने लगा—"हजारों मारे गये; बरेली के पास गाड़ियाँ लड़ गईं, सैकड़ों घायल हो गये; आज का ताजा पर्चा।"

प्रभुदयाल ने इस तरह शोर-गुल मचाकर चार-पांच पर्चे तुरन्त बेच डाले। उसका हौसला खुल गया। खून में तेजी आ गई।

एक सेठ ने जो दूसरी पटरी पर खड़ा था, आवाज लगाई "अखबार!"

प्रभुदयाल आवाज़ सुनकर गोली की तरह सड़क चीरता हुआ उस सेठ की तरफ दौड़ा। दूर से एक लम्बी मोटर तेजी से दौड़ी चली आ रही थी। प्रभुदयाल उसके साथ टकरा कर सड़क के बीचों-बीच गिर पड़ा। सिर फट गया, खून की धारा फूट पड़ी। अखबार के पर्चे खून के रक्त से लाल हो गये।

"ड्राइवर, यह तुमने क्या किया!" सीट पर से उछल कर एक लड़की बोली—"आदमी मार दिया, तुमने।"

"मेम-साहब, मेरा क्या कसूर है। अन्धा होकर सड़क के बीचोंबीच भाग रहा था: हार्न देने पर भी नहीं बचा।"

लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी। कोई कहने लगा गल्ती अखबारवाले की है; कोई कहने लगा गल्ती ड्राइवर की है।

कई कहने लगे, जल्दी हस्पताल पहुँचाओ, नहीं तो बेचारा मर जायेगा। सेठ बुलाकी राम की लड़की मोटर में थी। कई लोग वहां खड़े हुये उसे जानते थे। उन्होंने झट से प्रभु को उठाकर मोटर में डाल दिया और आप भी वहाँ साथ बैठ गये। मोटर हस्पताल पहुँच गयी। हस्पताल में प्रभु के सिर पर पट्टी बाँध दी गई और उसे लिटा दिया।

"इनका अच्छी तरह से ख्याल रखना। कल सुबह मैं इन्हें देखने आऊँगी"—लड़की ने कहा।

"ठीक हो जायेगा मेम-साहब, डरने की कोई बात नहीं। सिर्फ सिर में चोट आई है," ड्राइवर ने कहा।

: ५ :

सारी रात प्रभुदयाल आराम से सोया रहा। सुबह होते ही वह लड़की आई और डाक्टर को साथ लेकर प्रभु के कमरे में पहुँच गई। प्रभुदयाल अपने कमरे में आराम से लेटा हुआ था।

"अभी यह आराम से सो रहा है, जगाना ठीक नहीं,"—डाक्टर ने कहा।

"कहीं ऐसा ना हो कि बेहोश पड़ा हो"—लड़की बोली।

"नहीं, नहीं, हमने इसको एन्जेक्शन लगा दिये हैं, इसलिए यह आराम से लेटा है। कोई घण्टे भर में खुद ही उठ बैठेगा"—डाक्टर ने कहा।

उन दोनों की आवाज़ से प्रभुदयाल की आँखें खुल गई। वह एक लड़की और डाक्टर को अपने पास खड़ा देखकर, चौंक कर, डर सा गया और उठ कर बैठ गया।

"उठो नहीं, उठो नहीं, लेटे रहो," डाक्टर ने प्रभु को लेटाते हुए कहा।

"मैं कहाँ हूँ!" प्रभुदयाल ने पूछा।

"तुम हस्पताल में हो।"

"हस्पताल में मैं कैसे आया?"

"इन मेम साहिबा की मोटर से टकरा कर तुम गिर गये थे; यह तुम को अपनी मोटर में यहाँ ले आई।"

प्रभुदयाल मेम साहब से हाथ जोड़कर कहने लगा—"मेम साहिबा, मैं क्षमा माँगता हूँ।"

"क्षमा तो मैं तुम्हारे पास माँगने आई हूँ।"

"परन्तु, तुम्हारी मोटर से तो मैं टकराया था।"

डाक्टर ने कहा—"मरीज को ज्यादा बुलाना ठीक नहीं, चोट के जख्म अभी भरने हैं।"

प्रभु ने फिर पूछा "मैं कहाँ हूँ?"

"तुम हस्पताल में हो।"

"नहीं, मैं किस शहर में हूँ?"

"तुम बम्बई में हो। अच्छा, चुप करके लेट जाओ। अब हम जाते हैं।"

प्रभुदयाल की ऐसी सभ्यता भरी बातें सुनकर, लड़की का दिल पसीज गया। डाक्टर के हाथ में दस-दस के दो नोट रखकर बोली—"डाक्टर साहब, इनका अच्छी तरह से ख्याल रखना, कहीं दिमाग़ में कोई चोट तो नहीं लगी, पूछते थे किस शहर में हूँ।"

"चोट लगने के बाद ऐसा ही हो जाता है। एक दो दिन में ठीक हो जायेंगे, फिक्र की कोई बात नही," डाक्टर ने कहा।

"अच्छा डाक्टर साहब, कल सुबह मैं फिर आजाऊंगीं," कहकर वह लड़की चली गयी।

डाक्टर की जेब में बीस के नोट आ जाने के बाद उसमें स्फूर्ति आ गई। डाक्टर ने पास खड़ी नर्स को बुलाकर कहा—"देखो, जरा इनको दूध अच्छी तरह से पिलाओ, दिमाग़ पर चोट लगी है, कहीं ऐसा न हो कि दिमाग़ खराब हो जाये।"

प्रभुदयाल की अब खूब आव-भगत होने लगी। नर्सों ने दूध

पिलाना शुरू कर दिया और प्रभुदयाल जल्दी ही चारपाई पर उठ कर बैठ गया। अब वह समझ गया था कि उसको किसी की मोटर के साथ टक्कर लग गई है और वह हस्पताल में पहुँचा दिया गया है।

सुबह होते ही प्रभुदयाल उठकर बैठ गया, और एक किताब लेकर पढ़ने लगा।

आज वह लड़की एक सुन्दर साड़ी पहनकर हस्पताल में आई और सीधी प्रभुदयाल के कमरे में चली गई। प्रभुदयाल जिसके सिर पर सफेद पट्टी बंधी थी, रंग का गोरा खूबसूरत जवान, वहाँ बैठा अंग्रेजी की पुस्तक पढ़ रहा था। उसको देखकर वह धक् सी हो गई। थोड़ी देर वहाँ चुपचाप खड़ी रही।

प्रभुदयाल सुन्दर साड़ी में एक लड़की को पास खड़ा देखकर, अपनी आंखें नीची करके पुस्तक पढ़ता रहा।

"कैसी तबीयत है आपकी?" दो कदम आगे बढ़कर उस लड़की ने पूछा।

"अच्छी है," प्रभु ने पुस्तक बन्द करके कहा।

"यह आप क्या पुस्तक पढ़ रहे हैं?" पास पड़ी कुर्सी पर बैठते हुए उसने पूछा।

"यह एक नावेल है," प्रभुदयाल उसकी तरफ किताब बढ़ा कर बोला।

"तो क्या आप अंग्रेजी भी पढ़ लेते हैं?"

"हाँ, पढ़ ही लेता हूँ।"

"कौन सी जमात तक पढ़े हैं, आप?"

"एम० ए० तक पढ़ा हूँ," कहा प्रभुदयाल ने।

डर सी गई एकदम वह लड़की उसके मुँह से 'एम० ए०'

सुनकर और बोली—"तो आप शाम को अखबार क्यों बेच रहे थे ?"

घबरा गया प्रभुदयाल उस लड़की के मुँह से यह सुनकर और बोला—"आपने मुझे अखबार बेचते कहाँ देखा ?"

"आप अखबार बेचते हुए मेरी मोटर से टकरा कर गिर पड़े थे।"

"मैं इसकी आप से क्षमा माँगता हूँ," प्रभुदयाल ने हाथ जोड़ कर कहा।

"नहीं, नहीं, क्षमा मांगने तो मैं आपके पास आई हूँ पर मुझे आप यह बताइये कि जब आप एम० ए० तक पढ़े हैं तो अखबार क्यों बेच रहे थे ?"

"मैं नौकरी की खोज में यहाँ आया था। नौकरी न मिलने पर मैंने अखबार ही बेचना शुरू कर दिया। क्यों क्या कोई दोष है ?"

"नहीं, नहीं, दोष तो कोई नहीं है," अत्यन्त धीमी आवाज में लड़की ने कहा। अब वह समझ गई थी कि बात क्या है।

"अच्छा, यह लीजिए अपनी पुस्तक," पुस्तक आगे बढ़ाते हुए लड़की ने कहा।

प्रभुदयाल ने हाथ बढ़ाकर जब वह पुस्तक पकड़नी चाही तभी लड़की ने उसके हाथ पर लिखा हुआ नाम पढ़ लिया। बिजली-सी दौड़ गई उसके सारे बदन में और धीमी सी आवाज में प्रभुदयाल से पूछने लगी—"क्या आप ही का नाम प्रभु है ?"

घबरा-सा गया वह उसके मुँह से यह सुनकर और बोला—"हाँ मेरा नाम प्रभु है, पर आपको कैसे मालूम ?"

"क्या आप लेखक भी हैं ?" उसने फिर पूछा।

"नहीं, मैं लेखक नहीं हूँ। मैं नौकरी की तलाश में यहाँ आया हूँ," चकराते हुए दिमाग से, हाथ हिलाकर, सिर हिलाते हुए प्रभुदयाल ने कहा।

"नहीं आप लेखक हैं और आपके लेख मैंने बहुत पढ़े हैं," लड़की ने कहा। प्रसन्नता से फूलकर चारपाई से दोनों टांगें नीचे लटका कर प्रभुदयाल ने पूछा—"आपको कैसे लगे मेरे लेख ?"

"बहुत अच्छे।"

फूल कर कुप्पा हो गया प्रभुदयाल उस लड़की के मुँह से अपने लेखों की प्रशंसा सुन कर।

"अच्छा, अब मैं जाती हूँ," हाथ जोड़कर उसने कहा।

"अच्छा, आपने मुझे तो अपना नाम बताया ही नहीं ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

शर्माती हुई आंखें नीचे ऊपर करके उसने कहा—"मेरा नाम कंचन है।"

"कंचन ! तुम्हारा नाम कंचन है ? नहीं-नहीं तुम्हारा नाम कंचन नहीं हो सकता !"

तड़प गया प्रभुदयाल और फिर चारपाई की दूसरी तरफ खड़ा होकर दोनों हाथों से परे-परे करके कहने लगा—"तुम्हारा नाम कंचन है; नहीं, नहीं, तुम कंचन नहीं हो सकती।"

उसी समय हस्पताल का डाक्टर अन्दर आ गया।

प्रभुदयाल चुप करके चारपाई पर बैठ गया और अपनी पुस्तक पढ़ने लगा।

"अब कैसी तबीयत है ?" डाक्टर ने प्रभु से पूछा।

प्रभुदयाल अपनी पुस्तक पढ़ने में लगा रहा। और कुछ न बोला।

"अब तो इनकी तबीयत बिल्कुल ठीक है, अभी मेरे साथ किसी ड्रामे की रिहर्सल कर रहे थे," हँसते हुए जरा प्रभुदयाल को चिढ़ाते हुए कंचन ने कहा।

"अच्छा, कल हम इनको डिस्चार्ज कर देंगे," डाक्टर ने कहा।

"बहुत अच्छा डाक्टर साहब, कल मैं इनको खुद आकर सुबह साथ ले जाऊँगी, आपका बहुत-बहुत शुक्रिया," कहती हुई कंचन डाक्टर के साथ बाहर चली गई।

प्रभुदयाल वहाँ कुछ सोचता ही रह गया।

सुबह होते ही प्रभुदयाल ने डाक्टर से गेट-पास बनवा लिया और आहिस्ता से सबकी नजर बचाकर हस्पताल से बाहर हो गया।

थोड़ी देर बाद कंचन अपनी बियूक कार स्वयं ड्राइव करती हुई हस्पताल आई। मोटर से उतरकर, सीधी प्रभुदयाल के कमरे में चली गई। पर वहाँ अब क्या रक्खा था। चारपाई खाली पड़ी थी। जल्दी से डाक्टर के पास गई और पूछने लगी—

"डाक्टर साहब, प्रभुदयाल कहाँ है?"

"कौन प्रभुदयाल?" डाक्टर ने पूछा।

"वही अखबार बेचने वाला, मरीज," कंचन ने कहा।

"वह तो आज डिस्चार्ज कर दिया गया।"

"ओहो डाक्टर, तुमने गजब कर दिया। एक दुखिया लेखक के साथ अत्याचार कर दिया तुमने! उनको ऐसे क्यों जाने दिया?" माथे पर हाथ रखकर कंचन बोली।

एक पास खड़ी नर्स ने कहा, "अभी-अभी कोई दस मिनट हुए, हस्पताल से उस तरफ जाते मैंने उसे देखा है।"

यह सुनकर कंचन जल्दी से अपनी मोटर लेकर वहाँ से, उसी ओर चल पड़ी।

प्रभुदयाल जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाता हुआ आगे ही आगे जा रहा था और मुड़-मुड़ कर पीछे भी देखता जाता था कि उसे कोई पकड़ने तो नहीं आ रहा।

धड़ाम से, तेज मोटर लाकर, कंचन ने प्रभु के पास झटके से खड़ी करदी साथ ही जोर से हार्न बजा दिया। प्रभुदयाल घबरा कर गिरने-सा लगा।

"देखिये, आप मेरी मोटर के नीचे फिर से आने लगे थे!" मोटर से उतर कर कंचन ने कहा।

"नहीं-नहीं, मैं तो एक तरफ हो कर जा रहा था, यह आपकी मोटर ही यहाँ आ रुकी।"

"कहीं कोई चोट तो नहीं आई ?" पूछा कंचन ने।

"नहीं, चोट तो नहीं आई!" कहा प्रभुदयाल ने।

"आइये, मोटर में बैठिये, इस तरह सड़कों पर घूमना ठीक नहीं।"

"नहीं, अब मैं जाता हूँ," प्रभुदयाल ने कहा।

"कहाँ जायेंगे आप ? मैंने तो आपके लिए एक नौकरी ठीक कर ली है।"

"किसकी नौकरी है ?"

"आप बैठिये तो सही, बड़ी मुसीबत से तो मैंने आपके लिये नौकरी ढूँढी है।"

प्रभुदयाल उसके साथ मोटर में बैठ गया।

कंचन प्रभुदयाल को अपने बंगले पर ले आई। आलीशान

कमरा, चारों तरफ मखमल के गद्दे, बड़ी-बड़ी दीवारों पर लटकी तस्वीरें देखकर प्रभुदयाल दंग सा रह गया।

"बैठिये, बैठिये इस सोफे पर"—कंचन ने प्रभु से कहा।

प्रभुदयाल आहिस्ता से मखमल के गद्दे पर बैठ गया।

कंचन भी एक सामने वाले गद्दे पर बैठ गई। मेज पर रखी घंटी पर कंचन ने हाथ मारा। एक बैरा आकर सामने खड़ा हो गया।

"चाय लाओ।"

बैरे ने जल्दी ही चाय के सामान से मेज भर दी और मिठाइयाँ लगा दीं।

"यह तो आप मुझे खिलाने-पिलाने लग गईं। मैं तो यहाँ नौकरी के लिए आया हूँ," प्रभुदयाल ने कहा।

"अजी, नौकरी तो आपको मिल ही गई जानो, पाँच सौ रुपये की, अब चाय तो पी लीजिये," कंचन बोली।

"पाँच सौ की नौकरी! कहाँ है वह नौकरी?"

"हमारे दफ्तर में सम्पादक की नौकरी। आइये, चाय तो पीजिये।"

प्रभुदयाल अपनी जगह से उठकर चाय वाली मेज पर बैठ गया और कहने लगा—"आप क्या सच कह रही हैं?"

"सच नहीं तो क्या झूठ, अभी डैडी आते हैं तो बात पक्की हो जायेगी। लीजिये, चाय पीजिये," चाय का प्याला आगे बढ़ाते हुए कंचन ने कहा।

"यह लीजिये, मिठाई भी खाइये," कंचन ने प्रभुदयाल के सामने मिठाई रखते हुए कहा।

मुझे ऐसा मालूम होता है, जैसे आप मुझ भिखारी के साथ

हँसी-ठट्ठा कर रही हैं। मैं जाता हूँ," कहकर प्रभुदयाल वहाँ से उठ कर जाने लगा।

"लेखक जी महाराज, सुनिये मेरी बात," हाथ जोड़कर बोली कंचन—"किसी लेखक के साथ हँसी-ठट्ठा करना या उसे तंग करना गो-हत्या समान है।"

कंचन के मुँह से एक लेखक के लिए ऐसे अच्छे शब्द सुनकर प्रभुदयाल चाय पीने लग गया।

"अच्छा, आपने मेरे लेख कहाँ पढ़े हैं?"

"कई पत्रिकाओं में।"

"कैसे लगे आपको मेरे लेख?"

"बहुत अच्छे।"

"बहुत अच्छे!" दोहराया प्रभुदयाल ने।

"हाँ अभी तक तो बहुत अच्छे लगे हैं, परन्तु अब आगे कुछ पता नहीं, अच्छे लगें या बुरे!" कंचन ने कहा।

"क्यों अब क्यों बुरे लगने लगेंगे?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"यह मैं क्या जानूँ; मैं कोई साहित्यिक तो हूँ नहीं, पर कुछ थोड़ा बहुत अवश्य जानती हूँ।"

इतनी देर में एक मोटा-सा आदमी फुल सूट पहने हुए, मुँह में एक मोटा सिगार दबाये, धुआँ छोड़ता हुआ कमरे में दाखिल हुआ।

उसको अन्दर आते देख कर प्रभुदयाल अपनी कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया।

"बैठे रहो, बैठे रहो," एक कुर्सी पर बैठते हुए मोटे सेठ ने कहा।

"पिता जी, यह है मिस्टर प्रभु जिनके लेख आपको बहुत पसन्द आते हैं।"

"वाह-वाह मिस्टर प्रभुदयाल ! आपसे मिल कर मुझे बहुत खुशी हुई। भाई, क्या लिखते हैं आप ! कभी-कभी तो आप कमाल ही कर देते हैं। दिल ऐसा करता था कि आपको अवश्य मिला जाय। बहुत खुशी हुई आप से मिल कर।"

सेठ जी के मुँह से अपनी प्रसन्नता सुन कर प्रभुदयाल फूल गया।

"बम्बई में कैसे आना हुआ ?" सेठ जी ने बात बना कर पूछा।

"ऐसे ही जरा सैर करने," बदल गया प्रभुदयाल सेठ जी के सामने।

प्रभु के मुँह से 'सैर' का शब्द सुन कर सेठ जी बोले—

"अच्छा ! आप सैर करने आये हैं। नौकरी नहीं करोगे, पाँच सौ रुपये की एक सम्पादक की जगह खाली है; क्या आप ठीक काम कर लेंगे ?"

"हाँ-हाँ, कर लूँगा नौकरी, कहाँ है वह नौकरी ?"

"हमारे ही दफ्तर में, पुराना सम्पादक जा रहा है।"

यह सुन कर प्रभुदयाल को सनसनी-सी हो गई। वह सेठ जी के पास आकर उनकी टाँगें दाबने का अभिनय करने लगा और कहने लगा "सेठ जी, आप अवश्य मुझे उस जगह पर लगा दीजिये। बड़ा गरीब हूँ, बहुत मेहनत से काम करूँगा।"

"यहाँ मेहनत का काम नहीं है; सम्पादक की नौकरी है।"

"हाँ हाँ, सेठ जी ! आप मुझे एक दफा उस जगह पर बिठला दीजिये, हलचल मचा दूँगा एक दफा, टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा देश में फैले व्यभिचार के।"

"नहीं भाई, तुम न कर सकोगे वह नौकरी। वहाँ हमने

व्यभिचार के टुकड़े-टुकड़े नहीं करने, पर हमारा तात्पर्य सब बातों को छोड़ कर केवल रुपया कमाने का है।"

"कंचन ! कंचन पाने ही तो मैं भी आया हूँ, सेठ जी"—मेज पर एक जोर से मुक्का मार कर प्रभुदयाल बोला।

"तो हाथ मिलाओ !"

प्रभुदयाल ने आहिस्ता से अपना हाथ मेज पर आगे बढ़ा दिया और सेठ जी ने उसका हाथ अपने हाथ में पकड़ लिया और बोले, "प्लैज लिखो ?"

"हाँ, लिखो प्लैज।"

सेठ जी ने कागज पकड़ा और अपनी जेब में से सुनहरी कलम खींच कर मेज पर रक्खी हुई घण्टी पर जोर से हाथ मार कर लिखने लगे।

एक नौकर सामने आ कर खड़ा हो गया।

"शराब लाओ," सेठजी ने हुक्म दिया।

डर सा गया प्रभु, शराब का नाम सुनकर।

थोड़ी देर में नौकर एक बोतल शराब और दो छोटे-छोटे खूबसूरत गिलास वहाँ रख गया।

सेठ जी ने कागज पर लिखना शुरू किया :—

"मैं, प्रभुदयाल, आज यह वायदा करता हूँ, कि मेरा उद्देश्य इस अखबार के लिए पैसा कमाना ही होगा। मैं इस अखबार को चलाने के लिए ऐसे कामों से कभी पीछे नहीं हटूँगा जिनके करने से रुपये की प्राप्ति हो। मैं मुल्क की किसी भी जमात या सोसाइटी के साथ मिलने की कभी भी कोशिश नहीं करूँगा और मैं किसी पर कभी भी यह जाहिर नहीं होने दूँगा कि रुपया ले कर यह काम किया गया है।"

: ६ :

सेठ जी और प्रभुदयाल अखबार के दफ्तर में पहुँच गये।

अपने कमरे में एक बहुत बड़ी मेज के सामने प्रभुदयाल को बिठाकर, सेठ जी ने चपरासी को बुलाया और कहा, "सहकारी सम्पादक को बुलाओ।"

शीघ्र ही सहकारी सम्पादक वहाँ आ गये।

"देखो, तुम अपने कमरे में जाओ, यह नये सम्पादक आ गये हैं।"

छोटे सम्पादक ने प्रभुदयाल को नम्रता पूर्वक नमस्कार किया और वहाँ से चला गया।

"अच्छा लिली ! हम चल दिये।"

"कहाँ ?"

"अरी, नये सम्पादक आ गये !"

"कहाँ हैं ?"

"दफ्तर में बैठे हैं, अभी अभी आ रहे हैं।"

"अच्छा शान्ता नमस्ते, लिली नमस्ते !"

"नमस्ते," दोनों लड़कियों ने कहा।

छोटा सम्पादक वहाँ से अपने कागज़ात लेकर चला गया।

दोनों लड़कियाँ, लिली और शान्ता ने अपना-अपना बैग निकाला और उसमें से एक छोटा सा पफ़ निकाल कर जल्दी-जल्दी

मुँह पर पाउडर लगाने लगी और बालों में कंघी करने लगीं। पाउडर लगाकर, कङ्घी करके, दोनों ने आहिस्ता-आहिस्ता अपने होंठ लाल कर लिये और संभलकर वहाँ बैठ गईं।

"अरी, तू अपनी साड़ी तो ठीक करके बाँध ले, नीचे ढलक आई है।"

लिली झट उछलकर खड़ी हो गई और अपनी बैल्ट बाँधने लगी और बोली "अरी जल्दी ठीक कर ले अपनी साड़ी; नये सम्पादक आये बच्चा जी, पता नहीं कैसे हों।"

"बूढ़े हों या जवान" शान्ता ने लिली को चिढ़ाते हुये कहा और खड़ी होकर अपनी साड़ी ठीक करने लगी।

"तो तुझे क्या बूढ़ा सम्पादक अच्छा लगता है?" लिली ने अपनी बैल्ट बाँधते हुए कहा।

"अरी मार गोली बूढ़े सम्पादक को, सारा दिन बैठा हुआ 'खाँओं-खाँओं' करता है और दो शराब की बोतलें खाली कर देता है," शान्ता ने कहा।

"और लिखता एक अक्षर भी नहीं," लिली ने कहा।

"अरी, जब शरीर में रस ही नहीं रहा तो लिखे क्या खाक, शराब इसमें क्या करेगी", शान्ता बोली।

वह दोनों यह बातें कर ही रही थीं कि सेठ जी प्रभुदयाल को लेकर कमरे में घुस आये।

दोनों लड़कियाँ जल्दी से अपनी-अपनी जगह पर भीगी बिल्ली बन कर बैठ गईं और अपना काम करने लगीं।

"यह है आपकी मेज़ और यह है आपका कमरा और यह हैं आपके सहकारी।"

"लिली!" पुकारा सेठ जी ने।

"शान्ता !" पुकारा सेठ जी ने।

दोनों लड़कियाँ मेज के पास आकर खड़ी हो गईं।

"देखो लिली, यह आज से तुम्हारे नये सम्पादक हैं, और शान्ता, तुमने तो इनके लेख अवश्य पढ़े होंगे ? इनका ही नाम प्रभुदयाल है।"

"हाँ जी, इनके लेख तो मैं बड़ी दिलचस्पी से पढ़ती हूँ।"

"कैसे लगे आपको मेरे लेख ?" प्रभुदयाल ने उत्सुकता से पूछा।

"बहुत अच्छे, बहुत अच्छे, यह तो आज हमारे बहुत अच्छे भाग्य हैं जो कि आप जैसे एक उच्च लेखक हमारे यहाँ आये," शान्ता बोली।

"अच्छा, अब मैं जाता हूँ। देखो शान्ता, इनको कोई तकलीफ नहीं होनी चाहिये और लिली, तुम भी ठीक से काम करना," कहकर सेठ जी चले गये।

"अच्छा, तो आपको मेरे लेख बहुत अच्छे लगते हैं ? तुम बैठ जाओ दोनों।"

दोनों लड़कियाँ वहाँ मेज के सामने कुर्सियों पर बैठ गईं।

"भला बताओ तो सही शान्ता, तुमको मेरा कौन-सा लेख सबसे अच्छा लगा ?"

"आपके सभी लेख अच्छे हैं और जो इस मास की पत्रिका में आपकी कविता छपी है, उसमें तो बहुत ही रस भरा है।"

"कौन-सी कविता ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"वही कविता, जिसमें आपने लिखा है :—

मद का रस ना पी भौरे,
तू मद का रस न पी।

मद का रस जो तू पी लेगा भौरे,
मद हो जायेगा खाली ॥

बस, मुझे इतना ही याद है और इसके आगे याद नहीं।"

"मैं बताऊँ इसके आगे है, सुनो—

रस जब मद से निकल गया,
मद भी तड़फ के लटक गया।
तुझको भी कोई पी लेगा,
मद का रस न पी भौरे॥"

लिली ने समझा कि सम्पादक शान्ता के साथ ही रस ले-लेकर मीठी बातें कर रहा है, इसलिए वहाँ से चले जाना ही अच्छा समझा। उन दोनों लड़कियों में यह बात पहले ही तय हो चुकी थी कि जब कभी सम्पादक एक से मीठी-मीठी बातें करे तो दूसरी उठकर बाहर चली जाया करे।

लिली अपनी मेज से कुछ कागज़ात उठाकर आहिस्ता से प्रभुदयाल से बोली, "जरा यह कागज़ात दूसरे कमरे में पहुँचाने हैं, कोई आधे घंटे का काम है।"

"हाँ हाँ, काम कर आओ," प्रभुदयाल ने कहा।

लिली के ऐसे बाहर चले जाने से, शान्ता का कलेजा नये सम्पादक के सामने धक्-धक् करने लगा।

"अच्छा तो शान्ता, आप साहित्य में रुचि रखती हैं?"

"हाँ, कुछ थोड़ा बहुत", शान्ता ने आँखें मटकाते हुए और अंगुलियाँ मरोड़ते हुए कहा।

"अच्छा, अब तुम क्या काम कर रही हो, जरा मुझे लाकर दिखाना," प्रभुदयाल ने कहा।

शान्ता अपनी मेज़ से सब कागज़ात ले आई और प्रभुदयाल के सामने रखकर कुर्सी के पास ही खड़ी हो गई।

आहिस्ता-आहिस्ता वह कुर्सी के पास चिपट सी गई।

"अच्छा, यह काम है!" प्रभुदयाल ने कहा।

"यह देखिये यह है बम्बई के सट्टे बाजार के विरुद्ध लेख और यह है...... ।"

"अच्छा, आप सामने कुर्सी पर बैठ जाइये, जो मैं अच्छी तरह से समझ लूं," प्रभुदयाल ने कहा।

"नहीं, नहीं, मैं यहाँ ही ठीक हूं, लिली कोई आधे घण्टे में आयेगी, आप तब तक सब कुछ समझ लें," शान्ता ने कहा।

"अच्छा, तो फिर यहाँ ही अपनी कुर्सी ले आओ।"

शान्ता ने समझा तीर ठीक लग गया। यही तो वह चाहती थी कि लिली से पहले ही वह आज प्रभुदयाल पर अपना कब्जा कर ले: झट कुर्सी खींचकर प्रभुदयाल की बग़ल में बैठ गई।

अब क्या था, बेधड़क होकर उसने कागजों पर हाथ रख-रख प्रभुदयाल को समझाना शुरू कर दिया—

"हाँ जी, तो आप समझ गये, कि इस सट्टे बाजार के विरुद्ध लिखने से हमारे पास हजारों रुपये आते हैं; जब रुपये आ जाते हैं तो हम सट्टे बाजार के बारे में लिखना बन्द कर देते हैं और जब वह रुपये खत्म हो जाते हैं, तो हम फिर बड़ी तेजी से उनके विरुद्ध लिखना शुरू कर देते हैं और रुपये फिर आने लगते हैं। पढ़ने वाले भी खुश रहते हैं, सट्टा बाजार भी बना रहता है और हमारा काम भी चलता रहता है। पर ध्यान रखिये, सट्टे बाजार को बन्द कराना हमारा काम नहीं है, क्योंकि जब सट्टा बाजार बन्द हो गया तो समझ लीजिये हम सब भी मर गये।"

"अच्छा शान्ता, तू तो बहुत कुछ जानती है।"

शान्ता ने समझा मैंने खूब समझा दिया। फिर बोली, "और

सुनिये, दूसरा जरिया रुपये इकट्ठे करने का यह है—हमारे अखबार में बड़ी तेजी के साथ लेख लिखे जाते हैं कि यह वेश्याएं यहाँ से हटनी चाहिएं। यह शहर में व्यभिचार फैलाती हैं। फिर, जो यहाँ के बड़े-बड़े सेठ जो उनके पास जाते हैं, उनके खिलाफ लेखों का तांता बाँधा जाता है तो वो हजारों रुपया हमारा मुँह बन्द करने के लिए दे जाते हैं, पर याद रखिये—यहाँ आमदनी एक तरफ से ही होती है क्योंकि हमारे सेठ जी वेश्याओं से रुपये नहीं लेते। उनका कहना है कि यह वेश्याएं केवल रुपये की कुतिया होती हैं और इनसे रुपया लेने का प्रयत्न करना व्यर्थ है।"

"वाह व्यर्थ क्यों है? रुपया कमाना है। मैं ऐसे प्रयास करूँगा कि इनसे रुपया आये; सट्टे बाजार की तरह दोनों तरफ से गरमा-गरमी रहे।"

प्रभुदयाल के मुँह से यह सुनकर शान्ता ने आहिस्ता से अपनी गर्दन मेज पर रख दी और अपने लाल-लाल होठ प्रभु की तरफ करके बोली—"आप की कवितायें तो बहुत अच्छी होती हैं, मुझे भी कवितायें बनाना सिखादो।"

"आप भी कविता करती हो?"

"हाँ! करती तो हूँ, सुनाऊं?" शान्ता ने आँखें मटकाते हुए कहा—

"जब दोनों तरफ आग भड़क उठे,
उस को शान्त कौन करे।
प्रभु की माया है ही निराली,
शान्ता इस में अब क्या करे॥"

"कविता तो बहुत अच्छी है!" प्रभु ने कहा।

"इसका जवाब तो दीजिये," शान्ता ने आँखें मटकाते हुए बड़े नाज के साथ कहा।

"शान्ता इसमें शान्त करे," प्रभुदयाल ने कहा।

"वाह कवि जी—समझे ही नहीं मेरी कविता।"

शान्ता अपना सिर मेज़ से उठाकर मुँह बढ़ाती हुई बोली—"तो शान्ता इसमें क्या करे ?"

शान्ता ने आगे बढ़ कर, बेधड़क उसकी कुर्सी को पकड़ लिया और अपना मुँह उसके सामने कुर्सी पर कर दिया और बोली—"मैं बताऊँ, इसके आगे के बोल ?"

"हाँ बताओ।"

शान्ता ने बेधड़क होकर डरते-डरते कहा—"उस पर प्रभु की मोहर लगे"—और झट से अपना मुँह प्रभु के मुँह के पास ले आई कि बाहर से किसी ने दरवाज़े पर थपकी दी।

शान्ता ने झट खड़ी होकर दरवाज़ा खोल दिया। लिली अन्दर आ गई।

अन्दर आ कर लिली ने प्रभुदयाल से कहा, "आप को दफ्तर में सेठ जी बुलाते हैं।"

प्रभुदयाल झट कुर्सी छोड़ कर बाहर चला गया।

"अरी जा री, तूने बना बनाया काम बिगाड़ दिया !" शान्ता ने लिली से कहा।

"क्यों क्या हो गया, क्या सुहाग-रात मना रही थी ?" लिली ने शान्ता को चिढ़ाते हुए कहा।

"अरी हट कहीं की, क्या जरा पाँच मिनट देर में नहीं आ सकती थी ?" शान्ता ने कहा।

"अच्छा, तो तुम लोग कर क्या रहे थे ?" लिली ने पूछा।

"कर क्या रहे थे, वह इस बात पर बहस कर रहे थे कि वह इन वेश्याओं से भी रुपया ऐंठेंगे। इनके पास बहुत रुपया होता है," शान्ता ने बात बना कर कहा।

"तो फिर अब क्या हो गया ?"

"हो क्या गया, बात पहले दिन ही ठीक हो जाती तो अच्छा था। अब कल का क्या पता, लेखक हैं, कल क्या पता दिमाग बदल जाये।"

बात को कुछ समझती हुई लिली बोली—"सम्भाल तू ही ऐसे सम्पादक को जो पहले ही दिन भौंरे और रस की बातें करने लगा है।"

"चल हट, कहीं की," कहकर शान्ता अपनी मेज़ पर बैठ गई। दोनों लड़कियाँ काम करने लगीं।

: ७ :

दूसरे दिन सुबह ही प्रभुदयाल दफ्तर में आ गया और अपनी मेज़ पर बैठ कर काम करने लगा।

"गुड मार्निंग !"—लिली ने कमरे में दाखिल होते हुए कहा।

"गुड मार्निंग, मैडम !"—प्रभुदयाल ने लिखते-लिखते कह दिया।

लिली जाकर अपनी मेज पर बैठ गई और टाइप का काम करने लग गई। थोड़ी देर बाद लिली कुछ कागज़ लेकर जो बाहर निकली तो शान्ता बे-फिक्री से बाहर खड़ी हुई अपने किसी मित्र से गप-शप कर रही थी।

"अरी शान्ता, यहाँ खड़ी क्या कर रही है ?" लिली ने कहा।

"क्यों क्या सम्पादक जी आ गये ?" शान्ता ने पूछा।

"अरी सम्पादक जी तो सुबह से बैठे कागज़-पर-कागज़ काले कर रहे हैं।"

शान्ता जल्दी से अपनी साड़ी ठीक करती हुई कमरे में चली गई।

"नमस्कार"—शान्ता ने कमरे में घुस कर हाथ जोड़कर कहा।

"नमस्कार"—प्रभुदयाल ने फान्टेन पेन कागज़ों पर छोड़ते हुए कहा—"क्या आपको खाना पकाना होता है ?"

"नहीं जी, खाना तो मेरा खानसामा पकाता है। ऐसे ही जरा देर हो गई," शान्ता ने उत्तर दिया।

"अच्छा, यह देखो हमने चीर दिया आज सारा वेश्या-बाजार। कल हमारी सेठ जी से बड़ी देर तक बहस होती रही। मैंने उनको समझा ही दिया कि रुपया तो वेश्याओं के पास भरा हुआ है। सट्टे-बाजार वालों के पास क्या रक्खा है। एक की जेब में आज रुपया है, तो कल नहीं है; परन्तु इन वेश्याओं के पास तो रुपया आता-ही-आता है। जाता तो है ही नहीं, फिर क्यों नहीं इनका रुपया अपनी तरफ ढकेल लिया जाय। यह लो कागज़, जल्दी से इनको टाइप कर दो ताकि कल छप जाय।"

शान्ता ने कागज़ हाथ में पकड़ लिए और पढ़ने लगी कि इतनी देर में लिली कमरे में आ गई।

"अच्छा, इनको जल्दी से टाइप कर लाओ। थोड़े-से कागज़ लिली को दे दो, जल्दी टाइप हो जायँगे," प्रभुदयाल ने कहा।

"लिली को तो हिन्दी आती ही नहीं," शान्ता ने कहा।

"तुम इसको हिन्दी क्यों नहीं सिखा देती, लड़की तो बहुत अच्छी है। जल्दी ही सीख जायेगी।"

लिली की प्रशंसा सुनकर शान्ता झट से बोल पड़ी—"आप पढ़ा दिया करें हिन्दी इसको, मेरे से तो पढ़ती नहीं।"

"हम पढ़ा दिया करेंगे हिन्दी इसको। हिन्दी पढ़ना क्या कठिन है," प्रभु ने कहा।

शान्ता कागज़ लेकर अपनी मेज पर चली गई।

"अरी, सुबह-सुबह आकर क्या जादू फेर दिया सम्पादक पर?" शान्ता ने आहिस्ता से लिली से पूछा।

"मैंने क्या जादू फेरना था। मेज़ पर से सिर तो उसका उठा

नहीं। वे कागज़ पर कागज़ लिखने में लगा रहा है," लिली ने कहा।

"तेरी प्रशंसा जो कर रहे थे, हिन्दी पढ़ेगी सम्पादक जी से," शान्ता ने उसे छेड़ते हुए कहा।

"पढ़ लूँगी हिन्दी। हिन्दी पढ़ने में क्या है। तू तो मुझे पढ़ाती ही नहीं," लिली ने कहा।

"अच्छा बच्ची, तूने जरूर कोई जादू किया है आज," शान्ता ने टाइप के कागज़ टाइप पर चढ़ाते हुए कहा।

"काम कर काम। आज सुबह-सुबह ही इतना काम मिल गया है एक बजे तक खत्म न कर सकेगी," लिली ने कहा।

"पता नहीं आज किस मनहूस का मुँह देखा था," शान्ता ने टाइप को ठीक करते हुए कहा और ठा-ठा-ठा टाइप करने लग गई।

थोड़ी देर बाद टाइप करते-करते शान्ता बड़-बड़ाने लगी, "पता नहीं इसको इतना मसाला मिल कहाँ से गया।"

"अरी पगली, सारी रात कोठों पर घूमता रहा है," लिली ने कहा।

लिली की यह बात सुन कर, शान्ता की टाइप करते-करते जोर से हँसी निकल गई और उधर सम्पादक की कलम रुक गई।

"शान्ता!" सम्पादक ने पुकारा।

शान्ता उठ कर सम्पादक के पास भीगी बिल्ली की तरह खड़ी हो गई।

"शान्ता आप हँसी क्यों?" सम्पादक ने पूछा।

"यूँ ही हँसी आ गई!"—शान्ता ने कहा।

"कभी यूँ ही भी हँसी आती है। क्या लेख में कोई ऐसा

बात है जिससे आपको हँसी आ गई ? अगर कोई ऐसी बात है बताओ, मैं ठीक कर देता हूँ।"

"नहीं जी, लेख में तो कोई ऐसी बात नहीं है।"

"तो फिर तुम हँसी क्यों ?" प्रभु ने पूछा।

शान्ता चुपचाप खड़ी रही।

"शान्ता !" सम्पादक ने अपनी कुर्सी की ताक़त जिताने के लिए ज़ोर से पुकारा – "शान्ता, तुम मेरी प्राइवेट सेक्रेटरी हो— और अगर मेरे प्राइवेट सेक्रेटरी होते हुए भी तुम मुझ से बातें छुपाना चाहती हो, तो इससे पहले तुमको नौकरी से त्याग-पत्र दे देना चाहिये।"

थर-थर काँपने लगी शान्ता, सम्पादक की यह बात सुनकर और बोली—

"आप मुझसे यह बात न पूछिये और सब बातें मैं आपको हमेशा बता दिया करूँगी।"

शान्ता की यह बात सुनकर प्रभुदयाल के दिल में उत्सुकता सी हो गई और वह कहने लगा—"अगर तुम मुझे यह बात नहीं बता सकती तो तुम मेरे प्राइवेट सेक्रेटरी होने के योग्य नहीं। प्राइवेट सेक्रेटरी वह ही होता है जो कभी कोई बात न छुपाये।"

"परन्तु, परन्तु, यह आपके दूसरे सेक्रेटरी की बात है' आप मुझ से न पूछिये," रुकते-रुकते, डरते-डरते शान्ता ने कहा।

"लिली !" प्रभुदयाल ने पुकारा।

लिली अपनी जगह से उठ कर मेज के पास आ कर खड़ी हो गई।

"क्या बात है लिली, क्यों हसी थी शान्ता ?"

लिली चुपचाप वहाँ आँखें नीची किये खड़ी रही।

"बताओ !" जोर से कहा प्रभुदयाल ने।

"मुझे कुछ नहीं पता !" लिली ने कहा ।

"निकल जाओ कमरे से बाहर तुम दोनों लड़कियाँ !" चीख कर प्रभुदयाल ने कहा ।

"नहीं-नहीं, ऐसा न कहो, मैं बताती हूँ," शान्ता ने रोने की आवाज़ में कहा ।

"हाँ बताओ ?"

"मैं एक शर्त पर बता सकती हूँ कि आप लिली को नौकरी से नहीं निकालेंगे," शान्ता ने कहा ।

"नहीं-नहीं मैं उसको नहीं निकालूँगा, तुम बताओ क्या बात है ?" प्रभुदयाल ने पूछा ।

"अच्छा बताती हूँ । मैं जब टाइप कर रही थी, तो मैंने लिली से कहा कि पता नहीं सम्पादक जी को इतना मैटर कहाँ से मिल गया, तो लिली कहने लगी............नहीं-नहीं, इसके आगे मैं नहीं बता सकती," और शान्ता रोने लगी ।

"शान्ता, तुम इतना डरती क्यों हो । मैंने कह तो दिया कि मैं तुम दोनों को कुछ नहीं कहूँगा । कहीं कोई अपने प्राइवेट सेक्रेटरी को ऐसे नौकरी से निकाल देता है । वह तो प्राइवेट सेक्रेटरी होता है । उसकी सब बातें माननी पड़ती हैं ।"

प्रभुदयाल की यह बात सुन कर शान्ता की जान में जान आई और वह बोली—"अच्छा बताती हूँ । मैंने जब यह कहा तो लिली ने कहा कि सम्पादक जी सारी रात मैटर इकट्ठा करने के लिए कोठों पर फिरते रहे हैं," जल्दी से कह गयी शान्ता, सब कुछ और फिर दोनों लड़कियाँ डर कर खड़ी हो गईं । एक हल्की-सी मुस्कराहट आ गई प्रभुदयाल के चेहरे पर और उसने जोर से मेज़ पर रक्खी हुई घण्टी पर हाथ मारा । दोनों लड़कियाँ जो वहाँ खड़ी थीं, घण्टी की आवाज़ सुन कर कांप-सी गईं और

समझी कि अब चपरासी को बुला कर उनको बाहर निकाला जा रहा है।

घण्टी की आवाज़ सुन कर चपरासी अन्दर आ गया।

"तीन आदमियों के लिए शीघ्र चाय लाओ, साथ में मिठाई भी लाओ।" प्रभुदयाल ने कहा।

"बैठ जाओ शान्ता सामने कुर्सी पर, बस इतनी-सी बात पेट में छुपा रक्खी थी। बैठ जाओ लिली, तुम भी कुर्सी पर बैठ जाओ," प्रभुदयाल ने कहा।

दोनों लड़कियाँ सामने कुर्सी पर बैठ गईं।

थोड़ी देर में चाय आ गई।

"पीओ, चाय पीओ। शान्ता, लो चाय बनाओ," प्रभुदयाल ने कहा। दोनों लड़कियाँ एक दूसरे की तरफ देखने लग गईं। तीनों ने मिल कर चाय पीनी शुरू कर दी।

प्रभुदयाल बोला—"शान्ता, तुमने पढ़ा कुछ लेख ?"

"हाँ, कुछ-कुछ पढ़ा है," शान्ता ने चाय का घूँट पीते हुए कहा।

"पसन्द आया तुमको ? अच्छा लाओ, मैं तुमको पढ़ कर सुनाता हूँ।"

शान्ता उठ कर मेज़ पर से सब कागज़ उठा लाई।

प्रभुदयाल बोले, "देखो, इस लेख का नाम मैंने रक्खा है—'वेश्या की खिड़की' और यहाँ मैंने इस प्रकार लिखा है—

"वेश्याओं को सरे बाजार सज धज कर खिड़की में बैठना ही व्यभिचार का मूल कारण है। जब चलते-फिरते लोग, कालेज के लड़के लड़कियाँ यहाँ से गुजरते हैं, तो उनकी नजर वहाँ एकाधबार खिड़की पर अटक ही जाती है। आँखें बन्द करके तो कोई सड़क पर चल ही नहीं सकता। इसलिए हमारा यह कहना ठीक है

कि जब तक वेश्या को यहाँ से उठाने का निर्णय नहीं होता, तब तक इन की सब खिड़कियाँ ही तोड़ देने का हुक्म दे दिया जाय। खिड़की बनी रहने से वेश्या अवश्य वहाँ उठती बैठती रहेगी। जब उन की यह खिड़की न रहेगी तो व्यभिचार अवश्य कम हो जायेगा, क्योंकि पात्र और वासना का बहुत बड़ा सम्बन्ध है," कहते-कहते प्रभुदयाल की आँखें शान्ता के खूबसूरत लाल-लाल होठों पर अटक गईं; वासना भड़क उठी और फिर वह सम्भल कर बोला—"जब उनका कामरूपी मुख नजर नहीं आयेगा तो व्यभिचार न फैलेगा। न रहेगा बांस न बजेगी बाँसरी।"

"ठीक है शान्ता, ठीक है लिली।"

"हाँ जी ठीक है"—दोनों ने कहा।

"सुनो शान्ता, तुम होठों पर लाली लगा कर दफ्तर मत आया करो, लिली तुम भी, जाओ अब तुम अपना-अपना काम करो।"

दोनों लड़कियाँ जाकर काम करने लगीं।

: ८ :

दूसरे दिन मोटे-मोटे अक्षरों मे 'वेश्या की खिड़की' के नाम से तीन-चार पन्ने का लेख छप गया । लेख क्या था, लोगों को अपनी तरफ खींच लेने का एक टुकड़ा था । सारे शहर में उसकी चर्चा होने लगी; जिसको देखो वह यह ही एक दूसरे से पूछ रहा था,"क्यों भाई, तुमने पढ़ा आज का अखबार । 'वेश्या की खिड़की' का लेख पढ़ा ?"

कोई कहता—"अर्जी साहब, यह कमेटी-वाले जो यहाँ आकर मजे मारते हैं, ऐश भी करते हैं, और रुपया भी मारते हैं, तो वह क्यों सुनने लगे ।"

दूसरा कहता—"लालाजी, इन वेश्याओं से मेम्बरों को सौ-सौ रुपया माहवार की आमदिन है । देखा नहीं लाला मुंशीलाल को, मुँह में एक दाँत नहीं, गालें सारी पिचक कर अन्दर धंस गई हैं, फिर भी जब कभी मीटिंग होती है, वेश्याओं की ही तरफदारी करते हैं । कहते हैं जब तक इनके लिये कोई दूसरी जगह का इन्तजाम नहीं होता इनको छेड़ना ठीक नहीं ।"

"सुसरी भाड़ में जायें हमारी तरफ से । सारा शहर पड़ा है । उनके लिये ही उन्हें कोई जगह नहीं मिलती," दूसरा बोला ।

"अरे ! उनसे कहो एक-एक को अपने घर में रख लें," एक बूढ़ा हाथ मटकाते हुए बोला ।

"बदमाश हैं हमारे मेम्बरान," एक ने कहा ।

लेख की इतनी गर्मागर्म चर्चा देखकर अखबार वालों ने अपने आदमी भी शहर में चारों ओर चर्चा उकसाने के लिये छोड़ दिये थे। उनमें से एक लोगों के बीच में आकर बोला—

"अजी, जलूस निकाल दो। देखते हैं कैसे नहीं तोड़ते खिड़कियाँ। चलो सब कमेटी की तरफ। कुछ आदमी वहाँ और बोल पड़े "हां जलूस निकालो जी, जलूस निकालो !"

अब क्या था, अखबार वाले आदमी ने ही आवाज़ लगानी शुरू कर दी।

"वेश्याओं की खिड़कियाँ तोड़ दो। वेश्याओं की खिड़कियाँ तोड़ दो।" अखबार वालों का आदमी सब से आगे हो गया और जलूस को लेते हुए कमेटी की ओर चल पड़ा। थोड़ी देर पश्चात् जब उसने देखा कि भीड़ में उत्साह भर आया तो वह धीरे से वहीं कहीं भीड़ में लुप्त हो गया। जलूस में कमेटी के पास आते-आते अग्नि भड़क उठी थी। लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के नारे लगा रहे थे।

कमेटी वाले इस प्रकार अकस्मात् शोरगुल आता देख कर, खिड़कियों में से झाँकने लगे। हे भगवान् ! देखते क्या हैं कि शहर के सब मुहल्लों के लोग चारों ओर से नारे लगाते चले आ रहे हैं।

सारा नगर ही वहाँ पर इकट्ठा हो गया। जो जिसके मन में आता वही बोलता था।

कोई कहता था—"कमेटी के मेम्बर बदमाश हैं।"

कोई कहता—"कमेटी के मेम्बर वेश्याओं से रुपया खाते हैं।"

कोई कहता—"सारी रात वहीं पर काटते हैं।"

"इन की खिड़कियाँ तोड़ दो। इनकी खिड़कियाँ तोड़ दो।"

हजारों आदमियों के मुख से निकली आवाज़ ने कमेटी को दहला दिया। सब मेम्बर इतने आदमियों की भीड़ को देखकर घबरा गए। किसी को कुछ नहीं सूझता था कि क्या किया जाये। अन्त में कमेटी के अध्यक्ष महोदय बाहर आकर लाऊडस्पीकर से बोले—

"महानुभाव ! जिस प्रकार आप चाहते हैं इस प्रकार कभी भी कार्य पूर्ण नहीं होते। हमने भी आज अखबार में 'वेश्या की खिड़की' नामक लेख पढ़ा है उस पर हम भली प्रकार से सोच-विचार कर रहे हैं।"

भीड़ में से कई व्यक्ति बोल उठे—"सोच विचार से काम नहीं चलेगा।"

अध्यक्ष महोदय घबरा गये और फिर बोले :—

"आप लोग मेरी बात को समझे नहीं। हम इस बात पर सोच-विचार कर रहे हैं कि किस प्रकार शीघ्रातिशीघ्र इन खिड़कियों को तुड़वा दिया जाय और इसके लिए हमने एक मीटिंग बुलाई है।"

अध्यक्ष के मुंह से इस प्रकार की बातें सुन कर लोगों ने खूब तालियाँ बजाई और भीड़ के कुछ आदमी शान्त हो गये और अध्यक्ष की भी जान में जान आई।

किन्तु थोड़ी देर पश्चात् कुछ मनचले फिर बोल उठे—"इन घिस्सेबाज़ियों से काम नहीं चलेगा। वर्षों से हम सुन रहे हैं कि उनको निकाला जा रहा है। पर निकालने की अपेक्षा वह तो दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही हैं। आप सब मेम्बर कमेटी में उपस्थित हो। हमारे सामने ही मीटिंग कर लो, तब तक हम बैठते हैं। आखिर तो आप लोग हमारे ही चुने हुये हैं, यह कहते ही सबने आपस में कहना शुरू कर दिया

"बैठ जाओ, बैठ जाओ भाइयो, मीटिंग होने वाली है।" और वहाँ सब लोग कमेटी के सामने ही सड़कों पर बैठ गये।

ऐसा दृश्य देखकर तो अध्यक्ष महोदय की स्मरण शक्ति ही जवाब दे गई। भीड़ की ऐसी ज़िद तो उसने कभी भी न देखी थी।

मेम्बरों में कानाफूसी होने लगी। क्या किया जाय ? पुलिस वहाँ पर मौजूद थी। उस भीड़ पर जिन लोगों के चुने हुए मेम्बर वह वहाँ आए हैं, गोली चलाने से भी काम नहीं चलता था। सोच न सके कि क्या किया जाय ? अन्त में एक उठा और क्रोध से बोला—

"उसको पकड़ कर लाओ जिसने यह आग लगाई है।"

अध्यक्ष महोदय के माथे से पसीना बह रहा था वह अपने कमरे में जाकर टेलीफोन उठाकर करने लगे—

"हैलो" टेलीफून उठाकर सेठ जी बोले।

अध्यक्ष—"मैं कमेटी का अध्यक्ष बोल रहा हूँ।"

सेठ जी—"आज्ञा करें। दास के लिए क्या आज्ञा है।"

अध्यक्ष—"तुम जानते हो कि नगर में क्या हो रहा है ?"

सेठ जी—"नहीं सरकार।"

अध्यक्ष—"आग लगा दी है आपने और कहते हो नहीं सरकार। यदि नगर में दंगा-फ़साद हो जावे, तो इसका उत्तरदायित्व किस पर होगा ? रक्तपात हो जावे तो कौन उत्तरदायी होगा ?

सेठ जी—"ऐसी बात तो कोई नहीं।"

अध्यक्ष—"ऐसी बात कोई नहीं। हम तुम्हारी गिरफ्तारी का वारन्ट निकाल रहे हैं। पुलिस इन्सपक्टर भी मेरे पास यहीं

दफ़्तर में बैठे हैं। सारी भीड़ चारों तरफ़ से कमेटी घेरे बैठी है; हटती ही नहीं। अब तुम ही बताओ कि क्या करें ?"

सेठ जी—"सरकार, मैंने तो प्रातः का अखबार पढ़ा ही नहीं। आप एक मिनट ठहरें, मैं सम्पादक से पूछता हूँ।" डरते डरते सेठ जी ने मेज़ पर टेलीफून रख दिया। टेलीफून मेज़ पर रख कर सेठ जी प्रभुदयाल के कमरे में गये और बोले—

"प्रभुदयाल, ग़ज़ब हो गया। अरे भाई ! तुमने क्या कर दिया। सारे शहर में आग लगा दी। तुम्हारी तो गिरफ्तारी का आदेश निकाला जा रहा है।"

प्रभुदयाल हँस पड़ा सेठ जी की घबराहट देख कर और बोला—"सेठ जी, मेरी पहली ही चोट से घबरा गये। रुपया कमाने में चोर का कलेजा चाहिए—चोर का कलेजा ! डाकू का कलेजा चाहिए, सेठ जी !! उनसे कह दो कि प्रभुदयाल गिरफ्तारी से डरने वाला नहीं। अब वह साहित्यिक प्रभुदयाल नहीं अब वह साहित्यिक डाकू है। अब वह जो काम करेगा, रुपया कमाने के लिए करेगा।"

सेठ जी, प्रभुदयाल की बात सुन कर बोले—"वह कहते हैं कि अब हम क्या करें ? भीड़ हठ पकड़ गई है। और धरना मारकर बैठ गई है ; हटती ही नहीं।"

"तो फिर यूँ पूछें ! वह प्रभुदयाल को गिरफ्तारी की धमकी क्यों देते हैं। सेठ जी आप घबराना नहीं। पुलिस ऐसी मूर्ख नहीं। वह यह जानती है कि प्रभुदयाल को, जिसने यह आग लगा दी है, गिरफ्तार करने से भीड़ शान्त नहीं होगी और न ही आग ठंडी हो सकती है, वह तो उल्टा भड़क उठेगी और बल पकड़ लेगी।"

"तो वह पूछते हैं कि अब क्या करें। क्या भीड़ पर गोली चलवा दें ?"

"गोली कैसे चलवा दें। उनसे कह दो कि भीड़ अब उनकी नहीं। समूह अथवा समुदाय मेरा है। कोई उनके पास अपना दुःख लेकर सुनाने जावें, और वह गोली चलवा दें उन पर !"

"तो फिर क्या करें ?" सेठ जी ने पूछा।

"उनसे कह दो कि वह जन-समूह से कह दें कि कमेटी के आदमी वेश्याओं की खिड़कियाँ तोड़ने के लिए पहुँच गए हैं। मजदूर मिलने पर सब खिड़कियाँ जल्दी ही तोड़ दी जायेंगी। इतना कहने पर समूह उसी ओर दौड़ पड़ेगा और वह अपने आदमी पहुँचा कर कुछ खिड़कियाँ तुड़वा भी देवें," प्रभुदयाल ने कहा।

"ठीक है, ठीक है !" कहकर सेठ जी उठकर जाने लगे।

"ठहरिए, जब अपने काम की बात आई तो उठकर चलने लगे। सुनिये, कल का अखबार दस हजार से पचास हजार छापा जावे।

"यह क्यों ?" सेठ जी अचम्भे में आकर पूछने लगे।

"खिड़कियाँ टूट जाने के बाद, सब लोगों के मुख से प्रभुदयाल की महिमा घूमेगी। अभी तो यह बात बाजारों में ही घूम रही है और फिर घर-घर घूमेगी और बस आपका अखबार लेने सब दौड़ेंगे," प्रभुदयाल ने कहा।

"वाह भाई वाह ! तुम तो मुझे ज्योतिषी मालूम पड़ते हो," कहते हुए सेठ जी चले गए।

मेज पर से टेलीफून उठाकर सेठ जी बोले, "हैलो !"

अध्यक्ष महोदय टेलीफून का रिसीवर हाथ में पकड़े हुए, पुलिस इस्पेक्टर से बातें कर रहे थे कि टेलीफून में आवाज़ आई, रिसीवर को कान से लगाकर बोले—"हैलो।"

सेठ जी—"देखिए, हमारे सम्पादक साहब कहते हैं कि घबराने की ऐसी कोई बात नहीं। आप यूँ करें कि कुछ मज़दूर खिड़कियाँ तोड़ने के लिए भिजवा देवें। और भीड़ को कह देवें कि वह व्यर्थ ही वहाँ बैठी है, खिड़कियाँ तो तोड़ा जा रहा है।"

"ठीक है, ठीक है," रिसीवर को रख कर अध्यक्ष महोदय भीड़ से लाउड-स्पीकर में बोले—

"देखिए महानुभाव, आप लोग यहाँ पर व्यर्थ ही बैठे हैं। हमारे मज़दूर वहाँ पर खिड़कियाँ तोड़ रहे हैं। अपनी आखों जाकर देखें। आदमी कम होने के कारण शेष खिड़कियाँ फिर तोड़ी जायेंगी।"

यह सुन कर भीड़ ने तालियाँ पीट दीं।

हजारों तालियों की आवाज से कमेटी गूंज उठी। उन्होंने इतनी तालियाँ कभी भी नहीं सुनी थीं। अध्यक्ष के मुँह पर भी एक मुस्कराहट आ गई।

भीड़ उठ-उठ कर खिड़कियों के टूटने का तमाशा देखने भाग पड़ी।

उधर वेश्याओं की खिड़कियाँ टूट रही थीं और कुछ लोग खड़े हँस रहे थे और आपस में कह रहे थे, "वाह भाई वाह। प्रभुदयाल लेखक नहीं एक जादूगर है।"

अखबार वालों के प्रतिनिधि यह सुअवसर देखकर बोले, "चलो भाइयो, अखबार के सम्पादक प्रभुदयाल पर फूलों की

माला चढ़ावें और साथ-ही-साथ उनको धन्यवाद और बधाई भी दे आयें।"

"चलो भाई, चलो। हमारे लिए तो वही प्रभु हैं," कह कर लोग फूलों के हार इकट्ठे करके, अपने हाथों में लेकर अखबार सम्पादक के कार्यालय की ओर चले, रास्ते में नारे भी लगाते गये, "प्रभुदयाल ज़िन्दाबाद, प्रभुदयाल ज़िन्दाबाद।"

अब क्या था, पहले जो भीड़ कमेटी को घेरे थी, अब वह पत्र सम्पादक को घेरे थी। अब सेठ जी और उनके दूसरे साथी, इतनी बड़ी भीड़ को आते देख कर कुप्पा हो गये फूल करके!

लोगों ने प्रभुदयाल को फूलों से भर दिया। लोग हार पहनाते और प्रभुदयाल उनको उतार देते। लोग फूल चढ़ाते और प्रभुदयाल उनको हटा देते। बेचारे के हाथ उतारते-उतारते थक गये। वह थक कर बैठ गया कि तभी लिली और शान्ता दोनों ओर से होकर उनके गले से हार उतारने लगीं। भीड़ बढ़ती ही जा रही थी। अखबार के प्रतिनिधि लोगों से हार लेकर कमरे में फेंकने लगे और प्रभुदयाल तो मानो, मन्दिर के साक्षात् प्रभु हो गये। भीड़ अब भी बढ़ती ही जाती थी, तो सेठ जी ने कहा—"प्रभुदयाल, आप बाहर खड़े होकर जनता को अपने दर्शन से कृतार्थ करो।"

प्रभुदयाल उठे और बाहर आकर जनता के सम्मुख करबद्ध होकर खड़े हो गये। लोगों ने पत्र-सम्पादक प्रभुदयाल के दर्शन कर लिये और एक ध्वनि से कहा, "प्रभुदयाल ज़िन्दाबाद, प्रभुदयाल ज़िन्दाबाद।"

कई लोगों ने कहा कि हम प्रभुदयाल के मुख से कुछ सुनना चाहते हैं, तो प्रभुदयाल हाथ जोड़कर बोले—

"मैं आप लोगों का तुच्छ सेवक के नाते आप की सेवा सदैव ही करता रहूँगा और आप लोगों की सेवा करना ही मेरा कर्तव्य तथा धर्म रहेगा। आप लोगों ने जो आज मेरा आदर किया है उसके लिए मैं आप सब का आभारी हूँ और सबसे बड़ी प्रसन्नता मुझे इस बात पर है कि आप सब इस छोटे से पत्र को जिसका कि मैं सम्पादक हूँ, उठाये हुए हैं। यह आप ही का अखबार है और आप सब की ही आवाज़ है। अब आप से मैं क्षमा चाहता हूँ क्योंकि प्रातः कालीन समाचार पत्र के लिए कार्य करना है।"

विशाल जन-समुदाय ने तालियाँ पीट दीं।

प्रभुदयाल वहाँ से उठे और सारी भीड़ प्रभुदयाल का गुण गाते हुए विदा हुई।

: ९ :

"शान्ता, इतने सारे फूलों का तुम क्या करोगी ?"

"आप के गले में फिर से पहना देंगे।"

"हमारे गले में क्यों ? इन सबकी कुर्सी बना कर तुम दोनों उस पर बैठ जाओ," खुशी से प्रभुदयाल ने कहा।

"आप तो पूरे जादूगर निकले ! आपने तो कुर्सी पर बैठते ही 'एटमबम' चला दिया।"

"मैंने एक चलाया है, तुम दो 'एटमबम' चला दो," प्रभुदयाल ने मुस्कराते हुए कहा।

हंसने लगी दोनों लड़कियां एक दूसरे की ओर देख कर और फिर शान्ता बोली—

"पर हमारे 'एटमबम' से तो कोई मरता ही नहीं।"

"कभी कोई 'एटमबम' से मरता भी है। यह केवल दिखाने और डराने के लिए ही होते हैं। यह ऐसी ही वस्तुएं होती हैं जिन को देख कर लोग केवल डर जाते हैं," प्रभुदयाल ने कहा।

"तो मैं दिखाऊं आपको अपने 'एटमबम'," शान्ता ने प्रभुदयाल की ओर बढ़ कर कहा।

"हैं क्या आप के पास कोई 'एटमबम' ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"हां, मेरे पास दो 'एटमबम' हैं," शान्ता ने आँखें हिलाते हुए कहा।

"कहाँ हैं वह 'एटमबम' ? लाओ हमें भी दिखाओ !" प्रभुदयाल ने कहा।

"आप डर तो नहीं जायेंगे ?" शान्ता ने कहा।

"मैं क्यों डरूंगा। फेंक दूंगा दोनों को सट्टे-बाजार पर। मर जायेंगे सारे के सारे सट्टे बाजार वाले। बड़ा सोना-चांदी इनकी बगलों में दबा रहता है।"

दो कदम पीछे हट गई शान्ता, प्रभुदयाल के मुँह से ऐसी बात सुन कर। फिर दोनों लड़कियाँ चुपचाप अपने-अपने स्थान पर जाकर बैठ गईं।

"मैंने जो तुझ से कहा है कि तू सम्पादक से अधिक बातें ना किया कर" लिली ने शान्ता से अपनी कुर्सी पर बैठे ही कहा।

"कुछ समझ में नहीं आतीं इनकी बातें !" शान्ता ने कहा।

"अरी पगली, जितना हो सके, ऐसे सम्पादक से कम ही बोलना चाहिए। होंठों की लाली तो माफ करा ही दी, और मुझे डर है कि किसी दिन हमें यह न कह दें—"लिली, शान्ता ! कल से तुम दोनों उस्तरे से सिर के बाल मुंडवा कर आना।"

हँस पड़ी शान्ता लिली की यह बात सुन कर ! पर उसने जल्दी से ही अपनी हँसी को रोक लिया और सामने रक्खे टाइपराइटर पर हाथ मारने लगी ताकि सम्पादक पहले की तरह कहीं फिर न बुला ले।

थोड़ी देर के पश्चात् शान्ता बोली, "लिली, सुन मेरी बात। यह सम्पादक ऐसे बस में नहीं आने लगा।"

"तो क्या कोई जादू फेरेगी उस पर ?" लिली ने कहा।

"जादू नहीं। यह आँख से नहीं मरेगा, तो इसको नाक से मारूंगी मैं! हम जितना बन-ठन कर रहेंगी, यह उतना ही हमें अपने से दूर ही दूर रखेगा। देखा नहीं तूने उस दिन, जब 'वेश्या की खिडकी' का लेख पढ़ते-पढ़ते 'पात्र और वासना' पर आया था, तो कैसे उसकी आंखें मेरे लाल-लाल होठों पर आकर अटक गई थीं। खो चला था उस समय वह। किन्तु तत्क्षण ही उसने अपने आपको संयम में कर लिया," शान्ता ने कहा।

"और उसका नतीजा यह निकला कि उसने कहा कि यह होठों की लाली साफ़ करके आया करो," लिली झट से बोल पडी और फिर शान्ता को समझाने लगी—

"अरी, चुपके-चुपके काम करती जा। मुझे तो यह डर है कि किसी दिन वह यह न समझ ले, कि हम लड़कियों का यहाँ होना ही काम ठीक न होने का कारण है और फिर नौकरी से भी हाथ धोने पड़ें।"

"तभी तो कहती हूँ कि जितनी जल्दी हो सके इनको अपने बस में करना चाहिये। नहीं तो नौकरी चले जाने के बाद, कहाँ मिलेगी ऐसी अच्छी नौकरी?" शान्ता ने कहा।

"तो फिर तू कैसे नाक से इस पर नियन्त्रण करेगी? क्या रोज़ आकर इसकी मेज़ पर तीन बार अपनी नाक रगड़ा करेगी?" लिली ने पूछा।

"अरी पगली, मैं नाक रगड़ने को नहीं कहती तू तो समझी ही नहीं। यह सम्पादक जो होते हैं बड़े छुई-मुई होते हैं। जब आंखों से नहीं मरते तो सुगन्ध से झट मर जाते हैं। तनिक गुलाब का पुष्प हाथ में दे दो, झट नाक से लगा लेंगे। इसीलिये मैं कहती हूँ कि जब हमारे होठों की लाली गई तो हम कपड़ों में सुगन्धित पदार्थ लगा कर आया करें," शान्ता ने कहा।

"बात तो कुछ समझ में आ रही है," लिली बोली।

"मैं ठीक कहती हूँ। यह सम्पादक क्या बागों में पुष्पों को सूंघने नहीं जाते? वहीं जाकर तो उनमें रस और भौरे के ऊपर कविता बनाने की भावना उत्पन्न होती है और उन्हीं से उन्हें प्रेरणा भी मिलती है। पुष्पों की सुगन्ध से वह सुगन्धित हो जाते हैं।"

"बहुत गहरी पहुँच गई शान्ता, तू तो आज। बड़े दिमाग़ की बात सोची है तूने!" लिली ने कहा।

"क्या करे सम्पादक भी तो बड़े ठहरे मिले हैं। डर है कहीं नौकरी न चली जावे," शान्ता बोली।

"अच्छा तो आज, संध्या समय जाती बार एक-एक इत्र की शीशी लिये लेते हैं।"

दोनों लड़कियों ने बाज़ार से एक-एक शीशी खरीदकर अपने बैग में डाल ली।

× ×

दूसरे दिन लोगों ने हाथ बढ़ा-बढ़ा कर अखबार खरीदा। अखबार की पचास हज़ार प्रतियां बिक गईं। सम्पादक प्रभुदयाल की चर्चा घर-घर में होने लगी।

प्रभुदयाल अपने कमरे में बैठा लेख लिख रहा था।

"प्रभुदयाल, अरे भाई जादू कर दिया तुमने सारे जन-समुदाय पर। पचास हजार कापियां हाथों-हाथ बिक गईं," कुर्सी पर बैठते हुए सेठ जी ने कहा।

"यह सब आप ही की कृपा है," प्रभुदयाल ने जवाब दिया, हाथ जोड़ कर।

"अच्छा, तो कल फिर पचास हजार छापें ?" सेठ जी ने पछा।

"कल बीस हजार छापें," प्रभुदयाल ने कहा।

"बीस हजार क्यों ?" सेठ जी ने मुँह फेंकते हुए पूछा।

"लोगों में जो उत्साह था वह अब ठंडा हो चुका है," प्रभुदयाल ने उत्तर दिया।

"अरे भाई, यह क्या कहते हो ? सम्पादक हो। अब कोई और खिड़की खोल दो," सेठ जी कहने लगे।

"खोलूँगा सब खिड़कियाँ, सेठ जी। कहीं ऐसा न हो कि खिड़कियाँ खोलते-खोलते आप ही फंस जाये।"

"हाँ भाई, यह तो कहना ही भूल गया कि नगर की प्रसिद्ध वेश्या का टेलीफोन आया था। वह आप से मिलना चाहती है। मैंने उससे साफ-साफ कह दिया कि आप उनसे नहीं मिल सकते और ना ही वह कार्यालय पर आने का कष्ट करें।"

"देखना भाई प्रभुदयाल, 'वेश्या की खिड़की' तो तुमने खोल दी अब आप इन से बच कर भी रहना। मैंने सब आदमियों को कह दिया है कि किसी वेश्या को कायालय के द्वार पर न घुसने दिया जाय। इनका तो कार्यालय में आना ही बदनामी का कारण है; ठीक है ना ?"

"ठीक है; क्या काम है उनका यहाँ आने का," प्रभुदयाल ने कहा।

"भाई, अब कोई और खिड़की खोल दो," कहते हुए सेठ जी बाहर चले गये।

"यह दुर्गन्ध कहाँ से आ रही है ?" प्रभुदयाल ने सामने बैठी हुई दोनों लड़कियों से पूछा।

"ले सुन ले ! हम तो अपनी तरफ से सुगन्ध लगा कर आई

हैं और इनको दुर्गन्ध आ रही है। कुछ इनका दिमाग़ ही ठीक नहीं है," शान्ता ने कहा।

"अरी पगली, वे तो हमको छेड़ रहे हैं," लिली ने कहा।

"सची !"—शान्ता बोली।

"हाँ, सच"—लिली बोली।

थोड़ी देर पश्चात् प्रभुदयाल ने लिखते-लिखते अपनी लेखनी रोक दी। नाक मुँह चढ़ा कर बोला "उफ, बड़ी तीखी दुर्गन्ध आ रही है और यह लड़कियाँ कुछ करती ही नहीं।"

लिली हँस पड़ी और बोली, "सुन लिया। हो गया जादू तेरी सुगन्ध का। जा, अब तो उनके पास। जा बुला रहे हैं तुझे, कह रहे हैं कि यह लड़कियाँ कुछ नहीं करतीं। समझ गई ?"

"अच्छा, तो तू अब बाहर चली जा। मैं देखती हूँ, क्या कहते हैं", शांता बोली।

लिली धीरे से कुछ पत्र लेकर बाहर चली गई। शान्ता अपने स्थान पर बैठी हुई कार्य करती रही।

प्रभुदयाल अपनी मेज़ पर बैठा हुआ लिखता ही रहा। एक-दो बार शान्ता ने हिलना-जुलना भी चाहा, पर फिर भी प्रभुदयाल अपने कार्य में लगा रहा।

कोई आधे घंटे के पश्चात् लिली भीतर आ गई।

"क्यों री कोई बात हुई ?" लिली ने पूछा। "अरे कहाँ ! तब से बैठा हुआ कलम ही घसीटता जा रहा है। आँख उठाकर तनिक देखा तक भी नहीं।"

"चल झूठी कहीं की, मुझ से छुपाती है।"

"दुर्गन्ध, उफ नाक फट गई", कुर्सी छोड़कर प्रभुदयाल खड़ा हो गया।

"ले, सुन ले", शान्ता ने कहा।

"जब हम दोनों इकट्ठे होते हैं तो इसे दुर्गन्ध आने लगती है। चल, चल कर इनको पूछें, किस से इन्हें दुर्गन्ध आती है और किस से सुगन्ध", शान्ता बोली।

दोनों लड़कियाँ डरती-डरती उठीं और प्रभुदयाल के पास जाकर खड़ी हो गईं।

शान्ता ने पूछा, "बताइये, कहाँ से आप को दुर्गन्ध आ रही है और कहाँ से सुगन्ध?"

"अरे सुगन्ध नहीं, दुर्गन्ध आ रही है। मेरी तो दुर्गन्ध के मारे नाक फटी जा रही है और तुम्हें सुगन्ध आ रही है।"

"हमें तो यहाँ पर कोई दुर्गन्ध नहीं आ रही है," शान्ता ने कहा।

"अजी, उस दिन तो तुम्हीं कह रही थीं कि कमरे में एक चूहा मरा हुआ निकला था।"

"वह चूहा तो चपरासी ने बाहर फेंक दिया था। अभी, तक आपको उसकी दुर्गन्ध आ रही है।"

"अरी चूहा, तो मर गया, परन्तु उसकी चुहिया तो तड़फती फिर रही होगी। जान पड़ता है कि वह अपने चूहे के लिए तड़फ-तड़फ कर मर गई है और यह दुर्गन्ध उसी की आ रही है।"

"रहने दीजिए यह बहकी-बहकी बातें। चुहिया कभी भी तड़फती नहीं फिरती! उसने दूसरा चूहा कर लिया होगा। यूं कहिये कि सुगन्ध आ रही है, दुर्गन्ध नहीं," शान्ता ने तनिक पास चिपकते हुए कहा।

"मैं कहता हूँ दुर्गन्ध और तुम कहती हो सुगन्ध। कैसी पगली लड़की है! आओ, देखें कहाँ से दुर्गन्ध आ रही है।"

प्रभुदयाल कमरे की किताबें, अलमारियाँ और मेजें इधर-उधर करने लगे। शान्ता और लिली भी उसके साथ-साथ देखने लगीं कि चुहिया कहाँ मर गई है।

अन्त में प्रभुदयाल ने अपनी मेज के दराज खोलने आरम्भ कर दिये। शान्ता और लिली भी दराज खोल-खोल कर देखने लगीं।

एक दराज खोलते-खोलते झट से बन्द कर दिया प्रभुदयाल ने और बोला—"पता चला उस प्यारी चुहिया का जिसके पतिदेव देहान्त कर गये हैं?"

दोनों लड़कियाँ प्रभुदयाल के मुँह से, 'प्यारी चुहिया' का शब्द सुनकर खड़ी हो गईं और एक दूसरे की ओर देखने लगीं।

"आप ही बता दें कहाँ है वह प्यारी चुहिया?" शान्ता ने तनिक प्रभुदयाल के पास सरककर आँखें मटकाते हुए पूछा।

"इधर आओ मेरे पास शान्ता, मैं बताता हूँ वह प्यारी चुहिया कहाँ है।"

धक्-धक् करने लगी शान्ता की छाती प्रभुदयाल की बात सुनकर! दो कदम आगे बढ़कर प्रभुदयाल के पास आँखें नीची करके खड़ी हो गई। लिली दो पग पीछे हट कर पीठ फेरकर खड़ी हो गई।

"खोलो यह दराज।" प्रभु ने कहा।

शान्ता ने धीरे से दराज खोला। चीखकर दो फुट ऊँची उछल पड़ी डर के मारे और प्रभुदयाल के ऊपर गिर गई।

प्रभुदयाल ने उसे गिरते-गिरते अपने हाथों में थाम लिया।

चीख की आवाज सुनकर लिली ने जो मुँह मोड़कर देखा तो दराज खुला पड़ा है और उसमें एक चुहिया मरी पड़ी है। डर कर वह भी आ गई प्रभुदयाल के पास।

"देखा, मैंने कहा न था कि दुर्गन्ध आ रही है और तुम कहती थीं कि दुर्गन्ध नहीं सुगन्ध आ रही है। लो, अब इसे पकड़ कर बाहर फेंक दो," प्रभुदयाल ने शान्ता का हाथ खींचते हुए कहा।

शान्ता डर के मारे पीछे-पीछे हटती रही और प्रभुदयाल उसका हाथ पकड़ कर उस चुहिया के पास खींचता गया। थोड़ी देर इसी प्रकार खींचा-तानी होती रही पर शान्ता को उसमें कोई आनन्द प्राप्त नहीं हुआ। वह तो डर के मारे मरी जा रही थी।

प्रभुदयाल ने मेज़ पर रक्खी हुई घन्टी पर हाथ मारा और चपरासी भीतर आ गया।

"यह देखो, चुहिया मर गई है इसे बाहर फेंक आओ," प्रभुदयाल ने कहा।

"कुछ दिन हुए कि एक चूहा मर गया था, अब उसकी चुहिया भी मर गई, दोनों स्वर्गवास कर गये," कहते-कहते चपरासी दराज़ खींच कर बाहर ले गया।

दोनों लड़कियां अपना सा मुँह लेकर अपनी-अपनी जगह पर जाकर बैठ गईं।

: १० :

होटल में मौज-बहार लूटने के बाद कुमार बम्बई में एक रेशमी कपड़े की दुकान खोल कर बैठ गया। कामिनी उसके पास जाती और बड़ी देर तक प्रेम की बातें करती रहती और चलती बार सैंकड़ो रुपये का रेशमी कपड़ा उधार ले जाती।

कुमार आज कामिनी को साड़ी दिखलाते हुए बोला—

“कामिनी !”

“हाँ सरकार ।”

“तुम से एक काम है ।”

“आज्ञा करें ।”

“मेरे एक मित्र देहली से आये हैं ।”

इनका वहां बनारसी साड़ियों का बड़ा व्यापार है। मैंने उनसे एक पार्टी के लिये कहा तो कहने लगे—“यार, मुझे ऐसी वैसी पार्टी नहीं चाहिए।”

मैंने कहा, “ऐसी वैसी क्यों, वैभवपूर्ण पार्टी होगी।” इसपर वे बोले, “तुम्हारी पार्टी में कितनी लड़कियां होंगी ?”

मैंने कहा, “लड़कियां ही लड़कियां होंगी पार्टी में।” यह सुनकर उन्होंने झट जेब से सौ-सौ के पांच नोट निकाल कर मेरे सामने फेंक दिये और बोले. “पार्टी ऐसी हो कि आनन्द आजाए।”

मैंने कहा, “लड़कियां भी एक से एक बढ़कर होंगी।” तो

मेरी पीठ पर एक मुक्का मार कर बोले, "अरे जा यार झूठा कहीं का।" मैंने कहा, "झूठ नहीं सच कह रहा हूँ।" फिर मैंने कहा,— "बाम्बे का व्यापारी हूँ, इस बात का पता तो तुम्हें चल जावेगा कि कुमार क्या है!"

"कामिनी, अब तू ही बता कि क्या किया जावे। डींगें तो मैंने उसके सामने बड़ी-बड़ी मारी हैं पर कामिनी सारी बात यह है कि वह दिल्ली का बहुत बड़ा व्यापारी है। यदि कोई टिप्पस लड़ गई तो मुफ्त में हजारों रुपये का माल आ जाया करेगा।"

"यह बात है", कामिनी ने अपनी सुराही जैसी गर्दन को मोड़ कर कहा और पुनः बोली—

"अच्छा, लाओ फेंको पाँच सौ रुपये, और पार्टी की कोई चिन्ता न करें। एक से एक बढ़ कर सौन्दर्य्य और यौवन की मूर्तियाँ आपके पास पहुंच जावेंगी और एक बार तो आपके मित्र को संज्ञाहीन कर दूँगी।"

"कामिनी, क्या तू सच कह रही है?"

"सच, नहीं तो क्या झूठ कह रही हूँ। जब तक आपके हृदय में कामिनी के लिए स्थान है कामिनी भी तुम्हारे लिए सब कुछ करने को तैय्यार है।"

कुमार यह सुन कर फूल कर कुप्पा हो गया और झट पांच सौ रुपये कामिनी को पकड़ा कर अपने कैश बौक्स में से दो सौ रुपये और दे दिये और बोला—"कामिनी, तुम तो जानती ही हो; मेरा बाप दिल्ली का बड़ा सेठ है। परन्तु, कामिनी आजकल वह मुझसे कुछ नाराज रहते हैं। कहने लगे जाओ अपना कमाओ और अपना खाओ! और कामिनी तुम तो जानती हो कि तुम्हारे लिए मेरे दिल में कितना स्थान है।"

"मैं जानती हूँ," कहती हुई कामिनी ७००) रु० अपने बैग में रख कर चल दी।

कामिनी कोई छोटी-मोटी नाचने वाली नहीं थी! बहुत बड़ी-बड़ी नर्तकियों के ऊपर उसकी धाक् थी और बड़े-बड़े भद्र पुरुषों के घर के लड़के और लड़कियाँ भी उसके पास कभी-कभी नाच के बारे में आते जाते रहते थे। घर पहुंच कर कपड़े उतार कर कामिनी अपनी ऐश्वर्यपूर्ण रेशमी शय्या पर बैठ गई और पार्टी के बारे में सोचने लगी।

तिपाई पर रखी हुई घण्टी पर हाथ मार कर वह बोली, "मैं नाचूँगी!"

घण्टी की आवाज सुनकर एक बुढ़िया आ गई।

"चाय लाओ, बहुत गर्म", कामिनी ने कहा।

बुढ़िया चाय लेने चली गई।

कामिनी गोल्डफ्लेक के डिब्बे में से एक सिगरेट निकाल कर हाथ के झटके से लाइटर जला कर, सिगरेट लगा कर, छत की ओर मुँह ऊँचा कर के, धुआँ छोड़ते हुये उठ कर बैठ गई। और तिपाई पर हाथ मार कर फिर घण्टी बजाई और फिर बोली—"मैं नाचूँगी।"

बुढ़िया ने गर्म चाय मेज़ पर रख दी और कामिनी चाय पीते हुये एक बार फिर बोली, "मैं नाचूँगी।"

"कहाँ नाचोगी? नाचना तो तुमने वर्षों से बन्द कर दिया है," बुढ़िया ने कहा।

"पर यहाँ तो मैं अवश्य नाचूँगी," कामिनी चाय की गर्म प्याली पलेट में रख कर बोली और डिब्बे में से दूसरा सिगरेट निकाल कर पीने लगी।

"नाच कहाँ है ?"

"मैं नाचूँगी और अवश्य नाचूँगी।"

"पर नाचना कहाँ है ?"

"मैं नाचूँगी और अवश्य नाचूँगी," कहती हुई कामिनी अपने ऊपर से रेशम से कोमल शेर के कम्बल को उतार फेंक कर खड़ी हो गई और सिगरेट का धुआँ तेजी से मुँह से फेंकती हुई बोली, "मैं नाचूँगी।"

बुढ़िया ट्रे उठाते हुए बुड़बुड़ाते हुए कहने लगी—"पता नहीं इसको आज क्या हो गया है। पूछती हूँ कहाँ नाच है तो बताती नहीं। 'मैं नाचूँगी' 'अवश्य नाचूँगी' कहती जाती है," कहती हुई बुढ़िया ट्रे लेकर चली गई।

बुढ़िया को जाती देख कामिनी ने उसे पुकारा, "अरी नन्नी, ओ नन्नी ! रायल होटल में हमारा नाच है, और वहाँ केवल लड़कियाँ ही लड़कियाँ होंगी।"

"अद्भुत नाच है, जहाँ लड़कियाँ ही लड़कियाँ होंगी," नन्नी बोली।

"हाँ नन्नी, वहाँ केवल लड़कियाँ ही लड़कियाँ होंगी।"

"विचित्र नाच है। पर मालकिन नृत्य तो मनुष्यों को प्रसन्न करने की एक कला है।"

"अरी पगली, वहाँ कुमार साहब भी होंगे।"

"तो फिर यूं कहो कि कुमार साहब को प्रसन्न करने के लिए नाचोगी," कहती हुई और अपनी हँसी को दबाते हुए नन्नी ट्रे रखने चली गई।

कुमार और कामिनी के प्रेम को नन्नी भली प्रकार जानती थी।

नन्नी की यह बात कि कुमार को प्रसन्न करने के लिए नाचोगी, कामिनी को अच्छी नहीं लगी और वह कुछ झेंप सी गई।

नन्नी के पास जाकर झुंझला कर बोली, "कुमार साहब के एक मित्र आये हुए हैं, वहाँ मैं नाचूँगी।"

"ठीक है ! ठीक है !! ठीक है !!! नाच बड़े विलासपूर्ण और भव्यता से होना चाहिए," रसोई घर में ट्रे रखती हुई नन्नी बोली।

कामिनी ने बुढ़िया की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। झेंप से, उसने नन्नी का मुँह चिड़ा कर अपनी पीठ उसकी ओर मोड़ दी।

अपने ड्राइंग रूम में जाकर कामिनी ने अलमारी में से एक लाल रंग की साड़ी निकाली। उसको जल्दी-जल्दी पहन कर अपने अंग्रेजी फैशन के कटे हुए बालों को जो उसके कन्धों तक लटकते थे, कंघी करके, उनमें हाथ से बल डाल कर, लचकाती हुई जल्दी से मोटर में जाकर बैठ गई और मोटर को चलाती हुई, उड़ाती हुई चल दी।

आज रात तक उसने कुमार को कही हुई पार्टी का प्रबन्ध करना था और उस नाच का भी जो उसे अभी-अभी सूझा था। वह अपनी मोटर को तेज़ी से चलाती जा रही थी। थोड़ी देर में उसने मोटर एक गली में मोड़ दी और एक मकान के आगे ले जाकर रोक दी।

मकान के भीतर से, 'दा धिक धिन ना' की ध्वनि आ रही थी। कामिनी मोटर से उतर कर झट कमरे में घुस गई।

सामने एक चटाई पर एक अधेड़ उमर का व्यक्ति बैठा तबले

पर धीरे-धीरे उंगलियाँ चला रहा था और सामने खड़ी हुई उसकी १८ वर्ष की लड़की जो कि पूर्ण युवती थी, कालिज की लड़कियों को नाचना सिखा रही थी। कभी-कभी वह स्वयं भी घूम-घूम कर पैरों के घुंघरू बजाती हुई उनको पैर मारना समझाती जाती थी।

कामिनी के जाते ही बूढ़ा मास्टर तबला छोड़कर खड़ा होगया और नाच कुछ क्षण के लिए बन्द हो गया।

कामिनी नाच बन्द होता देख कर बोली,"नाचो, नाचना क्यों बन्द कर दिया ?"

कामिनी वहाँ चटाई पर तबले के पास बैठ गई।

थोड़ी देर के बाद लड़कियों ने फिर नाचना आरम्भ कर दिया और कामिनी भी अच्छा अवसर पाकर वहाँ ताल के साथ हाथ से ताली मारने लगी और शीघ्र ही उन लड़कियों के साथ हिल-मिल गई। बूढ़ा मास्टर आज कामिनी को इतनी प्रसन्न मुद्रा में देख कर नाच के खतम होने पर कामिनी से बोल उठा, "आप भी इन लड़कियों को कुछ नाच के बारे में बताओ।"

"हाँ, हाँ अवश्य," सब लड़कियाँ एक आवाज़ होकर बोलीं।

"मैं अब क्या नाचूँगी ?" कामिनी ने कहा।

"अच्छा, तो कोई बोल ही इनको सुना दो।"

लड़कियाँ, जो कामिनी की वेशभूषा देख कर और उसके हाथ में सोने की चूड़ियाँ देखकर यह समझी थीं कि वह किसी धनाड्य घर की लड़की है, उसके पास आकर बैठ गईं, और कहने लगीं—

"जरूर सुनाइये, हम आपको ऐसे न जाने देंगी।"

"अच्छा तो लो सुनो, मैं सुनाती हूँ। तुम नाचो और मैं गाती हूँ," कामिनी ने कहा।

सब लड़कियाँ खुशी-खुशी नाचने के लिये खड़ी हो गईं। और बूढ़े मास्टर ने भी अपनी गर्दन को कड़ी करके, ऊँची करके, तबले पर जोर की एक उँगली मारी और कामिनी गाने लगी—

"मूर्ख मन, हुआ तू क्यों इतना दीवाना।
तन, मन, अपना भूल गया है, तूने क्या है जाना॥
मन लोभी तो पाप करत है, ढूँढ के कोई बहाना।
मूर्ख मन, हुआ तू क्यों इतना दीवाना॥"

कामिनी इस प्रकार गाती जाती थी और सब लड़कियाँ पैरों के घुँघरू के साथ और ताल के साथ ताली बजाती जाती थीं और अपने हाथों को ऊपर-नीचे करके नाचती जाती थीं। कामिनी की ध्वनि इतनी सुरीली और प्यारी थी कि लड़कियाँ झूम-झूमकर नाचती जाती थीं और कामिनी की सुरीली आवाज़ का आनन्द लेती जाती थीं। बूढ़ा मास्टर भी तबले के ऊपर लटकता जा रहा था। सारा कमरा एक लहर में बहा जा रहा था।

जब कामिनी गाती थी, 'मूर्ख मन, हुआ क्यों तू इतना दीवाना' तो मास्टर तो बस मरा-सा जाता था! मानो यह स्वर उसके कलेजे में सीधे जाकर बड़े जोर से हिलोरें लेते थे। अन्त में उससे न रहा गया और चटाई पर पड़े हुए घुँघरुओं को अपने पैरों में बाँधकर खड़ा हो गया, और नाच-नाचकर गाने लगा—

"मूर्ख मन, हुआ तू क्यों इतना दीवाना।"

बूढ़े के उठ जाने पर कामिनी ने तबले पर भी चोट मारनी आरम्भ कर दी और थोड़ी देर तक वहाँ खूब आनन्द रहा।

आखिर कामिनी ने गाना बन्द कर दिया, और उसके साथ ही सब लड़कियाँ वहां घिर आईं और कहने लगीं—

"आपने तो कमाल ही कर दिया ! क्या आपका गला है और क्या ही सुरीली आवाज़ है आपकी !"

एक बोली, "दिल करता है कि आपकी आवाज़ को किसी डिब्बे में बन्द कर लूँ।"

दूसरी बोली, "भगवान् हमें ऐसा गला क्यों नहीं देता ?"

तीसरी बोली, "आप कभी-कभी यहाँ पर अवश्य आ जाया करो।"

बूढ़ा यह देख कर कि आज उसकी लड़कियाँ बहुत प्रसन्न हैं, कामिनी से बोला—

"कोई चाय-वाय लाऊँ ?"

"नहीं, क्या कष्ट करना है !"

"नहीं, इसमें कष्ट काहे का है।"

यह कहकर बूढ़ा मास्टर चाय लेने चला गया।

कामिनी भी उसके पीछे उठ कर बाहर आ गई और बाहर आकर उसके हाथ में दस-दस के दस नोट पकड़ा कर बोली—"मास्टर जी, यह है आपकी दक्षिणा ! आज रात को रायल होटल में एक नाच है और वहाँ तुम्हारी लड़की को जाना है। अमरीका से एक लेडी आई है और उनको हमने भारतीय नृत्य की विभिन्न प्रणालियाँ दिखानी हैं और साथ में एक पार्टी भी है। पर सुनो, यह पार्टी केवल लड़कियों के लिए है। वहाँ पर किसी पुरुष को जाने की आज्ञा नहीं है।"

"क्या हानि है, क्या हानि है," मास्टर ने रुपये जेब में रखते हुए कहा।

"दो टैक्सियाँ मैं भेज दूँगी, और हाँ सुनो, इन लड़कियों को भी अपनी लड़की के साथ भेज देना, कालिज की पढ़ी-लिखी लड़कियाँ हैं। ज़रा नाच की शोभा बढ़ जायेगी।"

"जरूर, जरूर, यह छः लड़कियाँ हैं। इनको मैं आपके सामने कहे देता हूँ।"

"देखो, साथ में इनको यह भी कह दो कि खूब सज-धज कर आयें। क्योंकि वह लेडी अमरीका से जो आई है, जरा अच्छा लगेगा," कामिनी ने कहा।

"जरूर, जरूर, सब कह दूँगा," मास्टर बोला।

कामिनी ने समझा तीर ठीक निशाने पर लग गया, बोली—"और सुनो, चाय सबके लिए बनवा लो।"

कामिनी ने अपने बैग में से एक दस का नोट और निकाल करके मास्टर को दिया और कहा, "यह लो, कुछ मिठाई-विठाई भी मंगवा लो।"

बूढ़े मास्टर ने दस का नोट लेकर रसोई में नौकर को पकड़ा दिया और बोला—"यह लो, चाय का पानी अंगीठी पर रख कर जल्दी से बाज़ार से अच्छी-से-अच्छी मिठाई ले आओ।"

कामिनी और बूढ़ा आकर बैठ गये और लग गये बातें करने।

कामिनी का लिबास, उसकी मुलायम और सुकोमल साड़ी और उसके अंग्रेज़ी फैशन के कटे हुए बाल देखकर लड़कियाँ उस पर मुग्ध हो गई थीं। कामिनी के पास से भीनी-भीनी सुगन्ध आ रही थी और लड़कियाँ उसके समीप आ-आ कर बैठती जाती थीं और उससे हँसी-मखौल की बातें कर रही थीं।

नौकर चाय ले आया। सब मिलकर चाय पीने लगे। चाय पीते-पीते बूढ़े मास्टर ने बात आरम्भ कर दी। अपनी लड़की से

बोला, "बाला ! कामिनी के यहाँ आज नाच है, अमरीका से एक लेडी आई हुई है और उसको दिखलाने के लिए एक नाच का आयोजन किया है। तुमको भी वहाँ जाना है।"

"क्या कामिनी भी वहाँ नाचेंगी ?" एक लड़की ने पूछा।

"अरे कामिनी के बारे में तुम क्या जानो। कामिनी जैसी तो सारे भारतवर्ष में कोई नाचने वाली है ही नहीं। अमरीका से लोग हजारों रुपया खर्च करके आते हैं। एक बार देखोगी तो दंग रह जाओगी।"

"हम कामिनी का नाच अवश्य देखेंगी," सब लड़कियाँ बोल उठीं।

"हाँ-हाँ, आप सब लड़कियाँ अवश्य आवें," कामिनी ने कहा।

"अमरीका से लेडी आई है। अमरिकन बड़े धनी होते हैं।" और फिर बूढ़े ने कामिनी की ओर आँख मार कर कहा, "तनिक अच्छी-अच्छी साड़ी पहन कर जाना।" और फिर अपनी बेटी से बोला, "बाला, तू तो वही मुलायम रेशमी साड़ी, जो मैं तेरे लिये लाया हूँ, पहन कर चली जाना।"

"हम क्या अमरीकन से कम हैं," सब लड़कियाँ बोल पड़ीं।

कामिनी यह समझ कर कि बात बन गई, बोली, "आप सब यहाँ बाला के घर आ जाना मैं दो टैक्सी आप को लेने के लिए भेज दूँगी।"

सब लड़कियाँ बोल उठीं, "जरूर, जरूर, जरूर भेजना।"

: ११ :

कामिनी चली गई। मोटर में दूर, नगर से परे एक बाजार में, जिसको 'हुस्न का बाजार' या 'रूप की मंडी' कहते हैं। चारों ओर से आवाज़ें ही आवाज़ें आ रही थीं। कहीं से गाने की ऊँची सुरीली आवाज़ आ रही थी तो कहीं से आवाज़ बड़ी मध्यम् थी। कहीं तबले पीटने की दा, धा, धन, ना की आवाज़ आ रही थी। कहीं से घुँघरुओं की छन-छन की आवाज़ आ रही थी। कहीं से गाली-गलौज और लड़ने-झगड़ने की आवाज़ आ रही थी।

कामिनी मोटर नीचे खड़ी करके ऊपर एक कोठे पर चढ़ गई। वहाँ एक बुढ़िया कम्बल ओढ़े सो रही थी। झट जाकर उसका कम्बल खींच लिया और बोली—"कम्बल ओढ़े पड़ी है, क्या ठंड में मर रही है। यह ले गरमाई!" उसके हाथ में दस-दस के बीस नोट दे कर कहने लगी—"बीस लडकियाँ! आज रात को दस बजे रायल होटल में, चाहिए। एक से एक अच्छी होनी चाहिए। अमरीका से एक औरत आई है, वहाँ मेरा नाच है।"

बुढ़िया ने नोट पकड़ कर अपने तकिये के नीचे दबा लिए और बोली—"जरूर, बीस लडकियाँ एक से एक बढ़ कर आज रात दस बजे पहुंच जायेंगी।"

"पाँच टैक्सियाँ मैं तेरे यहाँ भेज दूँगी। भली प्रकार डट डटा कर लाइयो।"

"वाह ! वाह !! क्या ठीक है। टेक्सियाँ आप हमें भेज दें तो क्या हमारी शान-शौकत किसी से कम है। मैं सब को यहाँ पर लाकर खड़ी कर लूँगी और ले आऊँगी, ज़रूर !"

"देख, अगर किसी प्रकार की कमी हुई तो दो सौ की जगह चार सौ ले लूंगी !" कहती हुई कामिनी चली गई।

'सब प्रबन्ध हो गया' कहती हुई कामिनी मोटर में बैठ गई और मोटर तेजी से चलाती हुई अपने बंगले पर आ गई।

सामने कुर्सी पर बैठी नन्नी स्वेटर बुन रही थी। आते ही स्वेटर की सलाई खींच कर बोली, "अरी नन्नी ! नाम तो तूने रख लिया है, 'नन्नी' और है तू किसी बुल-डौग की चाची। जब मैं तुझे बुलाती हूँ तो लोग समझते हैं कि नन्नी जरूर कोई सुन्दर, छोटी सी, नई नवेली लड़की होगी। लेकिन तू तो ऐसी है जैसे किसी खानसामा की भावज या किसी भैंस वाले की जोरू !"

"या किसी राजकुमार की रानी", नन्नी झट से बोल पड़ी।

"अच्छा, बता तूने कोई अमेरिकन लेडी देखी है ?"

"ना जी, मैंने तो अमेरिकन लेडी अभी तक नहीं देखी।"

"तो तूने देखा क्या है ? अरी, कभी कोई मेम नहीं देखी ?"

"हाँ मेम क्यों नहीं देखी ! अंग्रेजन की जो गोरी-गोरी औरत होये वही तो मेम होयें हैं। वह तो मैंने कुमार साहब की दुकान पर कई बार देखी हैं," नन्नी ने कहा।

"फिर वही कुमार साहब, कुमार साहब करती जाती है और जिस सवाल का जवाब पूछती हूँ वह नहीं बताती। अरी पगली, मेम लोग रंग की काली भी होती हैं," कामिनी ने कहा।

"ना रानी मैंने तो काली मेम अभी तक नहीं देखी।"

"गोरी तो देखी है ?" कामिनी ने पूछा।

"हाँ, गोरी तो मैंने कुमार साहब के यहां कई बार देखी हैं।"

"फिर वही कुमार साहब! सुन, तुझे अमेरिकन मेम बनना होगा।"

"ना बाबा, मैं अमेरकिन मेम न बनूं। मैं अंग्रेजी तो एक अक्षर भी न जानूं।"

"अंग्रेजी का एक अक्षर भी न जाने तो क्या है। अमरीका में तेरी जैसी ही काली भुजक्कड़ मेमें होती हैं।"

"तो मैं काली मेम हूँ," नन्नी ने पूछा।

"हां! जो अमरीका से अभी-अभी आई है।"

"अच्छा, तो मुझे क्या करना होगा?"

"आज रात रायल होटल में मेरा नाच है। वहां तुझे अमरीकन लेडी बनकर बैठना होगा! और करना यह होगा कि जब नाच खत्म हो तो धीरे-धीरे हलके-हलके दोनों हाथों से तालियां बजाना होगा और बस," कामिनी ने कहा।

"और बस! और कुछ काम नहीं?" नन्नी ने पूछा।

"बस, और कोई काम नहीं करना है।"

"बस! अमरीका की काली मेमें क्या इतना ही काम करती हैं?" नन्नी ने पूछा।

"हां, काली मेमें इतना ही काम करती हैं," कामिनी ने कहा।

"तब तो वह बड़े आराम से रहती हैं।"

"और वह चाय पिलाती हैं। सब समझ गई ना। अब जा, मुंह पर रबड़ ज़ोर-ज़ोर से रगड़, ताकि काली मेम से तू गोरी मेम बन जावे!"

"देखो रानी, अब फिर तुम वह मज़ाक करती हो।"

कामिनी अपने आलीशान कमरे के कोच पर बैठ गई जिसपर

शेर की खाल बिछी थी और रेशम के तकियों में रूई के स्थान पर पक्षियों के पंख भरे हुये थे। सिर के नीचे तकिया रखकर कामिनी टांगें कोच पर लम्बी करके लेट गई। गोल्ड-फ्लेक के डिब्बे में से सिगरेट निकाल कर पीने लगी और लेटे-लेटे कुछ सोचने लगी। वह सिगरेट पीती जाती थी और धुआं ऊपर छत की ओर छोड़ती जाती थी।

नन्नी ने खाना सामने मेज़ पर लाकर रख दिया। कामिनी हलका-हलका खा कर उठी। अलमारी में से मदिरा की बोतल निकाल कर थोड़ी सी छोटे से शीशे के गिलास में डाल कर पी गई। मदिरा अन्दर जा कर उसके रग-रग में फैल गई और उसके शरीर में तेज़ी का दौरा चलने लगा।

जोर से आवाज़ लगा कर बोली, "नन्नी"।

नन्नी आवाज़ सुनते ही झट से दौड़ी हुई सामने आकर खड़ी हो गई।

"जल्दी से गाऊन पहन कर काली मेम बन जा और तैय्यार होकर मेरे साथ चल। मेरी अलमारी में से मेरे लिए प्याज़ी रंग की साड़ी भी निकाल ला।"

नन्नी ने साड़ी निकाल कर कामिनी को दे दी।

कामिनी ने अपने लड़खड़ाते हाथों से नन्नी से साड़ी लेकर शीशे पर डाल दी। और फिर नशे में अपनी पहनी हुई साड़ी जल्दी-जल्दी खींच कर उतार डाली। साड़ी उतरते ही उसकी टांगें नंगी हो गईं। मदिरा के नशे में शीशे पर हाथ मार कर उसने अपना ब्लौज साड़ी के ऊपर से उठा लिया और अपनी नंगी टांगों में पहनने लगी! मदिरा का प्रभाव बढ़ सा गया था। ब्लौज उस की टांगों में फंस गया। और वह लड़खडाती हुई वहीं सोफे पर गिर पड़ी।

नन्नी समझ गई कि इसने आज कुछ अधिक पी ली है। और नन्नी यह जानती थी कि जब कामिनी को अधिक नशा हो जाय तो उस को गोदी में लिटा कर, दोनों हाथों से जोर से दबा कर, उसके दो तीन बार होंठ चूमने से उसका नशा कम हो जाता है।

नन्नी ने ऐसा ही किया और झट सोफे पर बैठ गई। कामिनी को अपनी गोदी में लपेट लिया और अपने दोनों हाथों से उसको कस कर दबा लिया और लगी उसके होंठ चूमने! दो तीन बार उसने उसके होंठ चूमे पर उस को संज्ञा न आई! आंखें बन्द, अपनी गर्दन नन्नी की गोद में डाले नंग-धड़ंग पड़ी रही।

यह देख कर नन्नी कुछ घबरा सी गई। आज इसको क्या हो गया? नाच पर यह आज कैसे जायेगी। क्रोध में झुंझला कर उसने अपने दोनों हाथों से कामिनी के गर्दन तक कटे हुए बाल पकड़ लिये और उन को जोर से अपनी ओर खींच कर, जल्दी-जल्दी, जोर-जोर से, उसके होंठों को चूमती ही गई। तंग आकर उसने जोर-जोर से उसके कानों में आवाज़ें लगानी आरम्भ कर दीं, "अजी आज उठेगी या यूं ही पड़ी रहेगी।"

इतना हिलाने-जुलाने से और खींचातानी करने से कामिनी का नशा उतरा और वह आँखें खोल कर जोर से बोली, "नन्नी, अरी नन्नी। नाच में जाने के लिए तैय्यार हो गई?"

नन्नी कामिनी को अपनी गोदी से उठा कर, सोफ़े पर बिठला कर, बोली "मैं तो यहाँ तुम्हारे पास ही बैठी हूँ।"

"अरी, तू यहाँ मेरे पास क्या कर रही थी?" कामिनी ने पूछा।

"तनिक आप का नशा उतार रही थी," कह कर नन्नी खड़ी हो गई।

"चल हट, जल्दी से तैयार हो जा देर हो रही है।"

नन्नी तैय्यार होने के लिये दूसरे कमरे में चली गई।

कामिनी ने कंघा हाथ में लेकर अपने बाल ठीक किये और शीशे के ऊपर से अपनी साड़ी लेकर धीरे-धीरे बाँधने लगी। ब्लौज पहन कर वह नन्नी के कमरे में चली गई और बोली—"अरी नन्नी, जल्दी तैय्यार हो जा और देख वह सफेद मोतियों की माला भी गले में डाल ले! इससे तू पूरी अमरीकन मेम बन जायेगी!"

नन्नी ने सफेद मोतियों की माला गले में डाल ली और वह दोनों मोटर में बैठ कर रायल होटल की ओर चल दीं।

: १२ :

रायल होटल का भव्य भवन, अत्यन्त सुन्दर और सजा हुआ होटल है। सैंकड़ों व्यक्ति यहाँ आकर रह जाते हैं, मजे मार जाते हैं, गुलछर्रे उड़ा जाते हैं और क्या से क्या कर जाते हैं, पर किसी को पता नहीं चलता !

कामिनी मोटर से उतर नन्नी को साथ लेकर जल्दी सीढ़ियों पर चढ़ती हुई एक बड़े कमरे में घुस गई।

कमरे में एक ओर रेशमी पर्दा पड़ा था। स्टेज बनी हुई थी। स्थान-स्थान पर कुर्सियाँ और मेजें रक्खी थीं। कहीं-कहीं सोफे रखे थे। पार्टी का सब समान वहाँ था।

कामिनी वहाँ सोफे पर बैठ कर गोल्डफ्लेक का सिगरेट पीने लगी। पाँच टैक्सियाँ होटल के सामने आकर रुकीं। अन्दर से रंग-बिरंगी साड़ियाँ पहने हुई लड़कियाँ उतरीं। कुछ छोटी, कुछ तरुण, कुछ अधेड़ और कुछ बहुत ही सुन्दर। इत्र गुलाब की सुगन्ध, फूलों की सजावट, एक एक को सौन्दर्य्य की देवी बनाकर वह बुढ़िया उन्हें वहाँ लाई थी।

चार-पाँच लड़कियों को जो बहुत सुन्दर थीं, साथ लेकर बुढ़िया कमरे में प्रविष्ट हो गई और शेष को दो-दो तीन-तीन कर के पीछे आने को कहा।

जवान-जवान लड़कियों को देख कर कामिनी बहुत

प्रसन्न हुई। गोल्डफ्लेक के डिब्बे में से एक सिगरेट निकाल कर बुढ़िया को देकर, सब लड़कियों को पास-पास बैठ जाने को कहा। चार-पाँच लड़कियाँ कामिनी के चारों ओर बैठ गई और शेष परे बैठ गई।

थोड़ी देर बाद कुमार साहब अपने मित्र को साथ लेकर होटल में आये! होटल के बैरे ने उन्हें बाहर ही रोक दिया।

"अरे मूर्ख! हमने पार्टी वाले कमरे में जाना है," कुमार ने कहा।

"जनाब, वहाँ किसी आदमी को जाने की आज्ञा नहीं है," बैरे ने उत्तर दिया।

कुमार साहब का मित्र रुष्ट हो गया और कहने लगा—"इतना अपमान!"

कुमार साहब फिर डाँटकर बैरे से बोले—

"अरे उल्लू के पट्ठे वह पार्टी तो इनकी खुशी में हो रही है।"

बैरा एक पग पीछे हट गया और कुमार साहब के मित्र को सलाम मार कर बोला—

"कामिनी की कठोर आज्ञा है। किसी पुरुष को अन्दर जाने की आज्ञा नहीं पर कामिनी को सूचना दे दी है।"

"मैं जाता हूँ। यह अपमान मैं सहन नहीं कर सकता," कहते हुए कुमार का मित्र जाने लगा।

कुमार ने उसका हाथ पकड़कर उसे बैठा लिया। इतने ही में कामिनी आगई।

कुमार खड़ा होकर चकित होकर कामिनी से पूछने लगा, "कामिनी! हमारे ही लिये यह पार्टी है, और हमें ही अन्दर आने को तुमने रोक दिया!"

"लड़कियों की पार्टी में तुम ऐसे कैसे जा सकते हो," कामिनी बोली।

"तो फिर ?" कुमार साहब चकित होकर पूछने लगे।

"फिर क्या, उठो यहाँ से !"

उठाकर कामिनी ले गई उनको दूसरे कमरे में और बोली, "उतारो यह कपड़े, और पहनो यह साड़ी और जम्पर !"

कुमार साहब और उसका मित्र चकित होकर एक दूसरे को और देखने लगे।

"अरे देखते क्या हो ? यह लड़कियों की पार्टी है और वहाँ सब लड़कियाँ ही लड़कियाँ हैं। सब सौन्दर्य्य की मूर्तियाँ, एक से एक बढ़ कर, तरुण और सुन्दर ! जल्दी से यह कोट पतलून उतार कर साड़ी और जम्पर पहन लो और फिर देखो नाच का आनन्द और पार्टी का मजा ! याद करोगे कि बम्बई में भी कोई पार्टी थी।"

कामिनी की काम-रस से भरी बातें सुनकर कुमार का मित्र फड़क उठा। उसने झट अपना कोट पतलून खींच कर परे फेंक दिया और साड़ी जम्पर पहन लिया। कुमार साहब ने भी साड़ी और जम्पर पहन लिया।

"लो, यह सिर पर बनावटी बाल लगाओ और जल्दी से होठों पर लाल सुर्खी लगाकर कानों में यह बुन्दे दबा दो !"

दोनों मित्रों ने सिर पर लम्बे-लम्बे बनावटी बाल रखे और शीशे के सामने खड़े होकर धीरे-धीरे होठों पर लाल सुर्खी लगाने लगे। कानों में बुन्दे दबाकर दोनों दोस्त चल पड़े कामिनी के साथ !

कमरे में पहुँचकर, वहाँ लड़कियों ही लड़कियों की भरमार देखकर दोनों की आँखें चुंधिया गईं। कमरा क्या था पूरा कामदेव

का अखाड़ा था। बुढ़िया चुन चुन कर एक से एक बढ़कर सौन्दर्य्य और यौवन की देवियाँ वहाँ लाई थी। कामिनी ने उनको नन्नी के पास बैठा दिया। पास ही सुन्दर सुन्दर लड़कियाँ बैठी थीं। दोनों मित्र कमरे में बैठी हुई परियों को देख रहे थे कि बाला कालिज की लड़कियों के साथ कमरे में प्रविष्ट हुई।

कामिनी झट उठकर खड़ी हो गई और कालिज की लड़कियों को नन्नी के पास जो इस समय अमरीकन-मेम बनी बैठी थी, ले गई।

लड़कियाँ झट अमरीकन-मेम से अंग्रेज़ी में पूछने लगी ("How do you do ?) आपका मिजाज कैसा है ?"

अंग्रेज़ी सुनकर नन्नी की आँखें बटन की भाँति चमकने लगीं।

कामिनी ने यह देखकर कि यह कालिज की लड़कियाँ हैं; कहीं अंग्रेज़ी में नन्नी से बातें न करने लगें और फिर सारा भण्डा ही फूट जावे, झट उन लड़कियों को लेजा कर परे बैठा दिया और बाला को वहीं कुमार साहब के पास जो बड़ी देर से टकटकी लगाये उसको देख रहे थे, बैठा दिया। सोफे पर जगह थोड़ी थी। बाला वहीं कुमार साहब के मित्र के पास धंस कर बैठ गई। सोफे पर स्थान कम होने के कारण बाला का मुलायम-मुलायम शरीर कुमार साहब के साथ रगड़े मारने लगा और कुमार साहब के अन्दर एक बिजली सी दौड़ने लगी। बाला तो वहाँ यह समझे बैठी थी कि वह एक स्त्री के पास बैठी है।

कमरों के सब दरवाज़े बन्द कर दिये गये। मेज़ों पर सब खाने-पीने की चीजें और सामान लगा दिया गया। सब खाने-पीने लगे।

कामिनी मधुबाला को लिवा कर अन्दर ले गई। मधुबाला

कमरे में जा कर अपने आपको सजाने लगी। और रङ्ग-बिरंगे कपड़े पहन कर मनीपुरी नाच के लिए तैय्यार हुई। मधुबाला ने आज अपने चेहरे की सजावट और लिबास में कमाल कर दिया। वह तो यह समझे बैठे थी कि अमरीका की मेम के सामने नाचना है कोई कमी न रह जावे।

पर्दा उठा और मधुबाला स्टेज पर पैरों से घुंघरू बजाती हुई आई, और नाचने लगी। नाचती गई, और नाचती गई। आज वह खूब हाथ खींच-खींच कर मटका-मटका कर नाची। सब लड़कियों ने ज़ोर-ज़ोर से तालियाँ बजाईं। नन्नी भी नाच खत्म होने पर धीरे-धीरे तालियाँ बजाती रही।

फिर कामिनी ने अपने सिर पर पगड़ी बाँधी और एक गड़रिये का भेष बना कर बाला का हाथ पकड़ कर पैरों से घुँघरू बजाती हुई स्टेज पर आ गई और नाचने लगी। इस प्रकार कामिनी बाला को पकड़ कर खूब नाचती रही और गाती रही।

अब कामिनी पठान की लड़की बन कर, सिर पर रूमाल बाँध कर, डफ् हाथ में लेकर, उछलती हुई, घुंघरू बजाती हुई आ गई। उसने आज खूब उछल-उछल कर डफ् बजाया। खूब नाची, खूब नाची और खूब नाची!

सब लड़कियाँ पार्टी खाती जाती थीं और नाच देखती जाती थीं। स्थान क्या था, मानो इन्द्र का अखाड़ा बना हुआ था।

इस प्रकार कामिनी और मधुबाला आज खूब नाचीं और खूब नाचीं और खूब नाचीं! नाचते-नाचते दोनों की टांगें भी दर्द करने लगीं।

रात के बारह बज चुके थे। मधुबाला थक कर कमरे में सोफे पर लेट गई।

कामिनी ने बाला से कहा, "बाला, बस एक मकड़ी-नाच और दिखा दो। मेम साहिबा कहती थीं कि हम मकड़ी-नाच ज़रूर देखेंगी।"

"मकड़ी-नाच तो मुझे नहीं आता।"

कामिनी ने झट मलमल से भी पतला दूध-सा सफेद जालीदार लहंगा उसे दिया और बोली—"मकड़ी-नाच क्या मुश्किल है। यह पहन लो और वही हाथों की उंगलियों को आगे-आगे करती जाओ और नाचती जाओ।

बाला ने वह लहंगा ले कर पहन लिया और कहने लगी, "नहीं-नहीं, मैं यह न पहनूंगी। इससे तो मेरा सारा बदन नंगा दिखाई पड़ता है।"

कामिनी उसके मुँह पर पाउडर लगाती हुई बोली—"अरी, तो क्या हुआ। बाहर कोई मर्द थोड़े ही बैठे हैं। सब औरतें ही औरतें तो हैं। उनसे क्या शर्म ?"

इस प्रकार मधुबाला को तैय्यार करके उसने स्टेज पर भेज दिया।

कुमार साहब और उनके मित्र यह दृश्य देख कर उछल पड़े !

मधुबाला जब उंगलियां नचाती हुई, अपने बदन को लचकाती हुई नाचती थी तो उसका अंग-अंग प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता था।

मकड़ी-नाच मुश्किल तो बहुत था। सारे बदन को हिलाना पड़ता था। बाला नाचती नाचती कुछ गिरने सी लगी कि कामिनी ने पर्दा गिरा दिया और पार्टी समाप्त हो गई।

बाला अधमरी-सी, थकी हुई; आकर कमरे में पलंग पर गिर पड़ी।

"बाला, आज तो तूने कमाल कर दिया। खूब अच्छा नाची

हो तुम। यह लो तनिक-सी दवा पी लो। अभी थकावट दूर हो जायेगी," और फिर छोटे-से सुन्दर शीशे के गिलास में भर कर कामिनी ने उसको शराब पिला दी।

शराब बाला की रग-रग में फैल गई और वह वहीं मरी-सी आँखें बन्द करके लेट गई।

कामिनी कुमार साहब के मित्र को जो बाहर औरत के भेष में बैठे थे, अन्दर ले गई और बाला के पास बैठा कर कुमार साहब से कहने लगीं, "ले री ज़रा मधुबाला की टांगें तो दबा दे! बिचारी बहुत थक गई है।"

कुमार साहब के मित्र ने मानो कोई खजाना पा लिया। झट मधुबाला, जो वहाँ मकड़ी का महीन जाल पहने संज्ञाहीन पड़ी थी, के पास आकर धीरे-धीरे उसकी टांगें दबाने लगा।

कामिनी ने बाहर आकर सब को बिदा कर दिया।

कुमार साहब का मित्र, बाला को इस प्रकार अपन पास संज्ञाहीन पड़ा देखकर, अपने आपको काबू में न कर सका। वह टाँगें दबाते-दबाते ऊपर तक पहुँच गया।

बाला इस प्रकार अपने शरीर को हिलता-जुलता देख कर घबरा कर कुमार साहब के मित्र को परे धकेल कर उठ बैठी। बाला ने जब इस प्रकार घबरा कर कुमार साहब के मित्र को परे धकेला तो उसके सिर के बनावटी बाल गिर पड़े।

एक पुरुष को अपने इतना समीप बैठा देख कर बाला डर गई। बाहर आकर कामिनी से जो बोतल सामने रखे, शराब पी रही थी, बोली—"कामिनी! मुझे घर पहुँचा दो।"

"इस समय घर कहाँ जाओगी, रात के दो बज चुके हैं, सुबह चलना। लो यह थोड़ा सा अनार का रस पी लो।"

बाला, जिस का कलेजा शराब पीने से पहले ही जल रहा था, हाथ बढ़ा कर उसे अनार का रस समझ कर पी गई। शराब पीते ही वह वहीं सोफे पर गर्दन फेंक कर नशे में सो गई।

इतने में कुमार साहब के मित्र अपने बनावटी बाल सिर पर रख कर बाहर आए और कामिनी ने उनसे कहा, "लो, तुम भी तनिक आनन्द ले लो।"

कुमार के मित्र ने झट गिलास लेकर शराब पी ली। कामिनी ने और शराब डाल दी। कुमार साहब के मित्र शराब बहुत पी गये और मदमस्त हो कर लगे बकने—'मेरी प्यारी मधुबाला तुम कहां हो? मधुबाला तनिक सा मधु पिला दो! मधुबाला तुम कहां चली गई? मेरी प्यारी मधुबाला तुम कहां हो?'

"वह रही तुम्हारी प्यारी मधुबाला। उठाकर अन्दर ले जाओ और दोनों आराम से सो जाओ।"

कुमार के मित्र ने लड़खड़ाते हुए हाथों से कौली भर कर मधुबाला को उठा लिया और ले जाकर उसे पलंग पर लिटा दिया और उसके साथ आप भी वहीं गिर गया।

दोनों शराब के नशे में चूर वहां लेट गये और खो गये! न ही उनके हाथ हिले और न ही पैर। कभी-कभी नशे में करवट लेते हुए उनके शरीर आपस में जरूर टकरा जाते थे।

सोते-सोते सवेरा हो गया। बाला की जब आंख खुली तो देखती क्या है कि वह मलमल से भी बारीक लहंगा पहने लेटी है और उसके साथ एक सुन्दर नवयुवक साड़ी पहने लेटा हुआ है। पास ही औरत के बनावटी बाल पड़े हैं और बिछौने पर रहीं बुन्दे गिरे पड़े हैं।

समझ न सकी, मामला क्या है? जल्दी से मकड़ी-जाल उतार

कर फेंक दिया और बाहर जाकर कामिनी से पूछने लगी, "कामिनी, यह औरत के भेष में एक मर्द मेरे पास क्यों लेटा था ?"

"कुछ नहीं, कुछ नहीं ! बाला, यह दिल्ली का करोड़पति है। तुम्हारा नाच देखना चाहता था ! रात को तुम दोनों ने खूब शराब पी ली और फिर तुम दोनों हँसते-हँसते, खेलते-खेलते यहीं सो गये।

कामिनी की यह भेद-भरी बात सुनकर बाला का मस्तिष्क चकरा गया और वह मुंह में उंगलियां डालकर वहीं खड़ी-खड़ी कुछ सोचने लगी।

बाला को सोच में देखकर कामिनी बोली—"मोटर नीचे तैय्यार खड़ी है। तुम तैय्यार हो जाओ, फिर चलें।"

"मैं तैय्यार हूँ," बाला ने रूखेदन में कहा।

"तो चलो फिर।"

"हाँ चलो।"

कामिनी ने अपना लोमड़ी के बालों वाला मुलायम सफेद पर्स उठाया और बाला के साथ मोटर में बैठ गई।

मोटर शीघ्र ही बाला के निवास स्थान पर पहुंच गई। रात बीत कर सवेरा हो गया था। बूढ़ा मास्टर अपने घर के बाहर, चबूतरे पर बैठा, पानी का लोटा पास रक्खे, दातून कर रहा था।

मधुबाला मोटर से उतर कर जल्दी से कमरे में घुस गई।

बूढ़ा मास्टर जल्दी से लोटे पर दातून रख कर कामिनी के पास गया।

कामिनी वहीं अपनी मोटर में बैठी-बैठी बोली, "रात को देर बहुत हो गई थी। हमने समझा प्रातः चले जायेंगे।"

"क्या हर्ज है, क्या हर्ज है। तुम जो साथ थीं फिर डर काहे का। यह तो फिर पार्टी भी औरतों की थी। औरतें जब नाचने गाने लगती हैं तो रात से दिन कर देती हैं," बूढ़े मास्टर ने कहा।

"हां देर हो ही गई! अच्छा मैं फिर जाती हूँ?" कहकर कामिनी ने मोटर चला दी और मोटर हवा से बातें करने लगी। मोटर में वह शीघ्र ही अपने बंगले पर पहुँच गई।

× × ×

प्रातः दस बजे कुमार के दोस्त ने उसकी दुकान में पैर रक्खा और बोले, "वाह यार। रात को तो तुमने कमाल कर दिखाया। याद करेंगे यार तुमको भी। पर मित्र एक बात है। पैसा जेब में एक भी नहीं। वापिस जाना मुश्किल है।"

"तार देकर रुपया मंगवा लो," कुमार ने कहा।

"यार तार देकर तो रुपया मंगवा लूँ परन्तु, मेरा बाप कुछ ऐसी ही तबीयत के आदमी हैं। तार वाले को देखकर उनका खून सूख जाता है, जब तक वह तार को खोल कर पढ़ न लें। डर है कहीं तार देख कर घबरा न जायं और फिर कहीं मुनीम जी को रुपया देकर बम्बई न रवाना करदें। वह तो यही समझेंगे कि मैं किसी विपत्ति में फंस गया हूँ। फिर यार, मुनीम का यहाँ आना भी ठीक नहीं कहीं सारा पर्दा ही फाश न हो जाये।"

"ठीक है यह लो दो सौ रुपये, आर्डर में कम कर देना।"

"आर्डर तुमने बना लिया?" दो सौ रुपये जेब में रख कर कुमार साहब के मित्र ने पूछा।

कुमार ने आर्डर की लिस्ट उसको देकर कहा—"यह लो,

बनारसी साड़ियों की लिस्ट है। माल भेज देना। कुल आर्डर कोई चार हज़ार रुपये का होगा।"

चार हज़ार का आर्डर हाथ में लेकर कुमार का मित्र बहुत प्रसन्न हुआ और बोला, "बस यार, मेरा तो बम्बई का टूर पूरा हो गया; एक ही व्यापारी से पर्याप्त बिजनिस मिल गया।"

"अपने आप से कह देना औरतों में कुमार साहब की बड़ी जान पहिचान है। बड़े घरों की अमीर औरतें, राजे-महाराजे उसकी दुकान पर आते हैं। एक ही महीने में सब माल बेच दूंगा"—और फिर उसकी ओर दबी हुई आंखों से देखकर कहने लगा,—"और देखो, माल एक मास के उधार पर भेजना।"

"चिन्ता न करो दोस्त। तुम माल बेचे जाओ। उधार तो तुम को मैं दो मास तक का दिलवा दूंगा।"

"तुम्हारा माल तो मैं इतना बेच दूंगा कि तुम बना न सकोगे।"

"माल तो बेच कर दिखाओ। फिर बम्बई के लिये एजेन्सी भी दिलवा दूंगा। पर देखो यार एक काम मेरा और कर देना! पेटियों में एक अत्यन्त सुन्दर साड़ी मैं अधिक रख दूंगा। यह साड़ी तुम मेरी ओर से मधुबाला को भेज देना।"

"ज़रूर, तुम्हारा यह काम न करके क्या तुम से जूतियां खानी हैं। सुना है यार, तुम रात को बहुत पी गये थे।"

"पी क्या गया था यार, बस तुम्हें याद रक्खेंगे। मधुबाला भी एक विचित्र चीज है। जरूर वह साड़ी उसके घर पहुँचा देना। फिर जब बम्बई आएंगे तो भेंट होगी।"

मोटर तैय्यार खड़ी थी। दोनों दोस्त मोटर में बैठ गये और

स्टेशन पहुँच गये। आराम से गाड़ी में बैठ कर थोड़ी देर तक आपस में गप्प-शप होती रही।

इंजन ने सीटी दी और कुमार साहब गाड़ी से नीचे उतर आये।

चलती हुई गाड़ी की खिड़की में खड़े होकर कुमार साहब के मित्र ने उनको फिर स्मरण कराया और कहा, "वह साड़ी उसके घर अवश्य भिजवा देना।"

"जरूर भिजवा दूंगा," कुमार साहब बोले और फिर दोनों दोस्त एक-दूसरे से हाथ हिलाते-हिलाते विदा हो गये। और वह बनारसी साड़ियों का व्यापारी मधुबाला की याद अपने साथ ले गया।

: १३ :

सेठ हुकमचन्द दिल्ली के रईसों में गिने जाते हैं। बनारसी साड़ियों का उनका थोक का काम है। हज़ारों का माल रोज़ आता जाता रहता है। सेठ जी गद्दी पर बैठे हुए, सुबह की डाक देख रहे हैं। पास ही एक साठ वर्ष का बूढ़ा मुनीम चौकी सामने रक्खे कुछ लिख रहा है। लिखते-लिखते जब बही का सफा भर जाता है तो पास रक्खी पीतल की दवात जिसमें छोटे-छोटे छेद हैं और अन्दर पीली रेत भरी है सफे पर छिड़क लेता है। यह ही उनका ब्लाटिंग का काम देती है।

पास ही रेशमी कुर्ता पहने, बालों पर खुशबूदार तेल लगाये, सेठ जी का लड़का रतनलाल बैठा है।

"मुनीम जी, कल जो रतनलाल बम्बई से आर्डर लाया है, उसके बारे में तुमने क्या सोचा ?" सेठ जी ने मुनीम से पूछा।

"सोचना क्या है, मैं तो यह समझता हूँ कि शुरू में एकदम से इतना माल उधार भेजना ठीक नहीं, आगे आप मालिक हैं," मुनीम जी कलम बही में रखते हुए बोले।

"यही तो मैं भी सोच रहा हूँ, मुनीम जी," सेठ जी बोले।

"एक हज़ार का माल भेज देते हैं, उसका रुपया आजाने पर दूसरी दफा दो हज़ार का माल भेज देंगे। व्यवहार तो चलाने से ही चलता है, सेठ जी," मुनीम जी ने कहा।

रतनलाल को मुनीम की यह बात बहुत कड़वी लगी और वह बोला, "पिता जी, आप तो सबको इस तरह शक की नज़र से देखते हैं। जब एक व्यापारी ने चार हज़ार का आर्डर दिया है, तो उसको एक हज़ार का माल भेजने में हमारी बदनामी नहीं है क्या? वह समझेगा कि इनके पास माल ही नहीं है। जब वह इतना माल बेच सकता है तभी तो उसने आर्डर दिया; नहीं तो क्यों देता। मुनीम जी तो यहाँ बैठे-बैठे बातें बनाते हैं। बम्बई जाकर देखें तो सही उसका कितना बड़ा काम है, बड़े-बड़े अमीरों की औरतें, राजे, महाराजे, रोज उसकी दुकान पर पानी की तरह रुपया बहाते हैं। क्या मेरे माँगने पर उसने झट-से दो सौ रुपये निकाल कर नहीं दे दिये? आपने कौन-सा उसको माल भेज दिया था!"

"यह तो बात ठीक है, मुनीम जी," सेठ जी ने मुनीम से कहा और फिर थोड़ी देर सोचकर बोले—"पर बेटा, वह पाँच सौ रुपये होटल में कैसे चोरी हो गये?"

"होटल में दिन-रात चोरियाँ होती रहती हैं। पता नहीं कैसे चोरी हो गये," रतनलाल ने कहा।

"सरकार, यह होटल तो चलते ही चोरियों पर हैं। आदमी कितना ही अन्दर से दरवाज़े बन्द करके सोये, होटल वाले जब चाहें बाहर से कला मरोड़ कर दरवाज़ा खोल लेते हैं," मुनीम जी ने रतनलाल की ओर देखते हुए कहा।

इस तरह माल भेजने की कशमकश हो ही रही थी की सेठ मुन्शीलाल दुकान के सामने से गुजरे। मुन्शीलाल को देखकर मुनीम जी झट बोल उठे—"सेठ जी, सेठ मुन्शीलाल जी जा रहे हैं बुला कर पूछ लेते हैं।"

"बुलाओ, बुलाओ, जल्दी बुलाओ!" सेठजी झट से बोले।

मुनीम जी गद्दी छोड़कर, सेठ मुन्शीलाल को बुलाने चले गये और अपने साथ लिवा लाये।

सेठ हुकमचन्द उनके दुकान पर चढ़ते ही कहने लगे—"सेठ जी, दुकान के आगे से चले जाते हो, कभी दर्शन ही नहीं देते। क्या आजकल बड़े काम में लगे रहते हो?"

"काम क्या है; बस दो रोटियाँ कमाने के धंधे हैं, सेठ जी। आजकल जरा सोना कुछ सस्ता है, सोचा थोड़ा सा गोटा ही बनालें।"

"सेठ जी, सोना तो बस आप का है। हमारा क्या है। महंगा खरीदा, महंगा बेचा, सस्ता खरीदा, सस्ता बेचा।" और फिर सेठ जी अपने लड़के की ओर मुँह करके बोले—"बस, अब यह चाहते हैं कि यह लड़का कुछ सीख जाये।"

"आ गया! यह तो बम्बई गया हुआ था?" मुन्शीलाल जी बोले।

"हाँ, कल आया है।"

"कुमार के पास तो नहीं गया?" मुन्शीलाल ने पूछा।

"गया था" और फिर कुमार साहब का चार हजार का आर्डर सेठ मुन्शीलाल के आगे रख कर बोले—"यह आर्डर उसने दिया है। यह लड़का कहता है उसका काम काज वहाँ खूब चला हुआ है। बड़े-बड़े अमीरों की औरतें, राजे, महाराजे आदि आते हैं। और रुपया वर्षा की तरह बरसता है। हमारा तो यह लड़का बड़ा नालायक़ है। पाँच सौ रुपये होटल में चोरी हो गये। दो सौ रुपये भी कुमार से माँग कर लाया है।"

सेठ मुन्शीलाल सेठ हुकमचन्द के मुख से अपने लड़के की प्रशंसा सुनकर फूलकर कुप्पा हो गये! शरीर में हर्ष की लहरें चलने

लगीं। मेरे लड़के का इतना अच्छा काम चला हुआ है। सेठ हुक्मचन्द से अकड़ कर बोले—"तो फिर माल भेजने में क्या अड़चन है ?"

"नहीं सेठ जी, अड़चन कोई नहीं।"

"नहीं, कोई अड़चन हो तो मुनीम जी को कोठी पर भेज कर चार हज़ार रुपये मंगवा लो," सेठ मुन्शीलाल जी कहने लगे।

"अजी नहीं सेठ जी, कैसी बातें करते हो।" और फिर सेठ हुक्मचन्द जी मुनीम जी की ओर देख कर पूछने लगे, "मुनीम जी ! वह माल आपने पेटियों में बन्द करा दिया ना ?"

मुनीम जी इन बातों में बड़े होशियार थे। झट से बोले, "सरकार, आदमी स्टेशन पर बुक कराने गये हुये हैं। बस रेलवे रसीद की प्रतीक्षा है।"

"रसीद आने पर आज ही रजिस्ट्री करा देना," सेठ जी ने कहा।

"आज ही लो सरकार, ज़रूर-पर-ज़रूर ! अभी सरकार," मुनीम जी बोले।

फिर सेठ जी मुन्शीलाल जी से बोले—"आप दुकान के आगे से जा रहे थे, मैंने कहा जरा बुला कर, लड़के के काम-काज का हाल ही सुना दूँ। आज कल के लड़के बड़े चतुर हैं, सेठ जी। पहले ही साल में अच्छा काम जमा लिया। चिट्ठी-पत्री तो आपके पास आती ही होगी।"

"मैं दस-पन्द्रह रोज़ में बम्बई जा रहा हूँ ! कोई ऐसी-वैसी बात हो गई तो जाकर देख लूँगा," कह कर सेठ मुन्शीलाल जी चले गये।

बस अब क्या था। रतनलाल शेर हो गया। सेठ मुन्शीलाल की दुकान से जाते ही गरज कर बोला—"मुनीम जी, जाओ कोठी मे जाकर चार हज़ार रुपये ले आओ। माल तो तुमने भेज ही दिया। बस, रेलवे रसीद की प्रतीक्षा कर रहे हो?"

"बेटा, तू नहीं जानता यह हमारे मुनीम बड़े चतुर और समझदार होते हैं।"

"तभी तो मैं भी कह रहा हूँ कि यह कोठी से जाकर चार हज़ार रुपया क्यों नहीं ले आते। माल तो इन्होंने भेज ही दिया और और फिर रतनलाल मुनीम की ओर क्रोधित होकर बोला—झूठा कहीं का।"

बेटे को इस प्रकार रुष्ट और क्रोधित देख कर सेठ जी मुनीम को डांटने लगे—"मुनीम जी, तुम हो बिल्कुल बुद्धू। ऐसा कौन सा रुपया मारा जाता था। आखिर वह भी तो सेठ मुन्शीलाल का लड़का है।"

बस अब क्या था। बाप को भी अपनी ओर होता देख रतनलाल गरजा, "इस बूढ़े का तो दिमाग ही खराब हो गया है। पिता जी, आप कहते न थे कि साठ वर्ष के पश्चात् मनुष्य का मस्तिष्क कमज़ोर हो जाता है, तो फिर आपने इस साठ वर्ष के बूढ़े को क्यों रक्खा है। सरकार तो ५५ वर्ष के बाद आदमी को बेकार समझ कर निकाल देती है, और आप इस ६५ वर्ष के बूढ़े को घसीटते ही जा रहे हैं।"

"बेटा, यह बूढ़ा तो अब मरकर ही यहाँ से जायेगा," सेठ जी बोले।

"यह मरता भी तो नहीं, गोटा-किनारी सूँघ-सूँघ कर दिन प्रति दिन जवान होता जाता है।"

"छोटे सरकार, मेरा क्या है, मुझे तो आज मरा या कल मरा समझें। मैं तो बस यही चाहता हूँ कि आप काम-काज सीख लें तो आराम से आखें मीचूँ," बूढ़ा मुनीम कहने लगा।

"तेरी आँखे तो मिच कर फिर खुल जाती हैं। तेरे से तो भगवान् भी नाराज़ हैं। उनके यहाँ भी तेरे जैसे शक्की और सुस्त आदमी के लिए कोई स्थान नहीं। तुम मन्दिर में जाकर भगवान् के सामने घण्टी बजाया करो और फूल-बताशे चढाया करो, फिर कहीं जाकर वह तुम्हारे लिये कोई जगह बनाएंगे।"

सेठ हुक्मचन्द जी अपने बेटे का इस प्रकार मुनीम पर नाराज़ देख कर बोले,—"मुनीम जी, बैठे हुए क्या बातें बना रहे हो। अच्छी-अच्छी साड़ियाँ निकाल कर जल्दी से पेटियों में बन्द करा दो।"

"यह बिचारा क्या साड़ियाँ निकालेगा। इसको यहीं पर बैठे कलम घिसने दो। मैं स्वयं ही सब माल निकलवा देता हूं।" कह कर रतनलाल उठकर खड़ा हो गया और चुन-चुन का उसने चार हज़ार की साड़ियां निकालीं। एक बनारसी साड़ी निहायत ही सुन्दर, जिसमें सोने का काम हुआ था और मूल्य में लगभग ३००) रु० की थी, मधुबाला का ध्यान करके आंखें मींच कर, साड़ी को चूम कर निकाल ली, और अन्य साड़ियों के साथ चुपके से पेटियों में बन्द कर दी। पेटियां बन्द कराके माल स्टेशन पर भिजवा दिया।

रेलवे रसीद आ जाने पर मुनीम जी ने रजिस्ट्री कराके, कुमार साहब को भेज दी और इस प्रकार उसके पास चार हज़ार का माल भेज दिया गया।

× × × × ×

माल कुमार साहब ने खोला। साड़ियों की चमक-दमक देख कर उनका हृदय प्रसन्नता से भर गया। सब साड़ियां एक से एक बढ़ कर थीं! दुकान चारों ओर से जगमगाने लगी। उन साड़ियों के बीच में से एक सुन्दरतम, रङ्गदार कागज़ में लपेटी हुई एक साड़ी निकली जिसके साथ एक कार्ड पर लिखा हुआ था—"मधुबाला के लिये।"

कुमार ने झट से वह साड़ी एक ओर रख दी और सब साड़ियों को बिना बीजक से मिलाए ही दुकान में सजा दिया और कामिनी को जल्द आने की सूचना दी।

कामिनी अपने बालों में सेन्ट लगा कर, अपना सफेद बटुआ बगल में दबा कर झट से अपनी मोटर दौड़ाती हुई वहां पहुँच गई। चारों ओर नई-नई चमकती-दमकती साड़ियां देख कर कुमार साहब से बोली—"क्या जगमगा रही है आज आप की दुकान!"

"यह सब तुम्हारी ही कृपा है," कुमार ने कहा।

कामिनी चारों ओर फिर-फिर कर साड़ियां देखने लगी और कुमार उसको साड़ियां खोल-खोल कर दिखाने लगा।"

"साड़ियां तो बहुत अच्छी हैं," कामिनी बोली।

"तुमको पसन्द हैं?"

"मुझे तो बहुत पसन्द हैं।"

"तो ले लो एक दो, बोहनी तुम्हारे ही हाथ से करें?"

"ले लूंगी, अभी तो मैं रुपये नहीं लाई," कामिनी ने अपनी सुराही जैसी गर्दन घुमाते हुए कहा।

"रुपये की अच्छी चिन्ता की तुमने, यह दुकान भी तो आप ही की है," कुमार बोला।

"कामिनी ने दो-दो सौ रुपये की दो सुन्दर साड़ियां चुन लीं ! और कुमार साहब ने उनको डिब्बे में बन्द करके कामिनी को दे दिया।"

कामिनी दोनों डिब्बे बगल में दबा कर बड़ी प्रसन्न हुई और बोली—"रात को बंगले पर आओ। इकट्ठे खाना खायेंगे।"

"अवश्य आऊंगा," और फिर वह जाती हुई कामिनी से बोला, "एक काम करना है कामिनी, यह साड़ी रतन ने भेजी है ; मधुबाला के यहां पहुँचानी है।"

"हो गया फिर नशा, तुम्हारे मित्र को मधुबाला का?" कामिनी ने हँसते हुए पूछा।

"कुछ न पूछो, कामिनी ! कहता था मधुबाला हिन्दुस्तान की सब मधु-मक्खियों का निचोड़ा हुआ मधु है।"

यह सुन कर कामिनी ज़ोर से खिल-खिला कर हंसने लगी और बोली—"भारतवर्ष, की सब मक्खियों का निचुड़ा हुआ शहद है। लाओ वह साड़ी । पहुँच जायेगी मधुबाला के पास । और उसको लिख देना कि यह मधुमक्खियाँ ठीक नहीं, कभी कभी वह डंक भी मार देती हैं।"

कामिनी की यह बात सुनकर, कुमार कुछ डर सा गया और कामिनी से कहने लगा, "कामिनी, हमारे मित्र को तो केवल शहद ही शहद खिलाते रहना। उसको कहीं डंक न लगा देना।"

"तुम्हारे मित्र को कौन डंक मार सकता है," कह कर कामिनी साड़ियों के तीनों डिब्बे बगल में दबा कर मोटर में बैठ गई और चल दी।"

वह सुन्दरतम् साड़ी जो रतन ने मधुबाला के लिये भेजी थी, जा कर, उसने बूढ़े मास्टर के सामने रख दी और बोली—"मास्टर

जी, यह साड़ी उस अमेरिकन मेम ने आपकी बेटी मधुबाला के लिये भेजी है और साथ लिखा है कि उनको आप की लड़की क नाच बहुत पसन्द आया है।”

साड़ी का डिब्बा खोल कर, बूढ़ा मास्टर फूल कर कुप्पा हो गया। खुशी से अपनी बेटी को आवाज़ लगाने लगा—

“ओ री मधुबाला !”

मधुबाला पास आकर खड़ी हो गई। कामिनी और मधुबाला की आंखें दो चार हो गईं।

बूढ़ा मास्टर बोला, “बाला ! यह तुम्हारे लिये साड़ी है।”

“कौन लाया है यह साड़ी ?” मधुबाला कुछ चिढ़ कर बोली।

“बेटी, यह साड़ी तुम्हारे लिये, उस अमेरिकन मेम ने भेजी है, जहां तुम रात को नाचने गई थीं और लिखा है कि तुम्हारा नाच उन्हें बहुत पसन्द आया।”

मधुबाला का बदन यह सुनकर जल गया और वह कहने लगी, “फेंक दो इस साड़ी को। मुझे नहीं चाहिये।”

बूढ़ा मास्टर अपनी लड़की को क्रोधित देख कर, उसके मुंह की ओर देखने लगा और बोला—“बेटी, तुम वहां नाच करने नहीं गई थी ?”

“हां, गई थी।”

“बस, उसी ने तो खुशी में तुम को यह साड़ी भेजी है, देखो यह कितनी सुन्दर है !”

“मुझे नहीं चाहिए यह साड़ी। इसको वहीं वापिस भेज दो जहाँ से यह साड़ी आई है,” मधुबाला ने कहा।

"वापिस भेज दें। बेटी साड़ी तो अमेरिका से आई है। वापिस भेजना भी तो आसान नहीं।"

"तो लगा दो आग इस साड़ी को," तेज़ी से कहती हुई मधुबाला अन्दर चली गई।

बूढ़ा मास्टर बेटी की उल्टी-उल्टी बातें सुनकर हैरान हो गया और कामिनी से बोला, "मैं समझा लूंगा बेटी को। आज इसका चित्त ठीक नहीं है। चावल अधिक खा गई है यह आज और ऊपर से पानी बहुत पी गई है। पेट भारी हो गया है। चावल अन्दर जाकर फूल जाते हैं। मैंने तो इसको कई बार मना किया है कि चावल अधिक न खाया कर, पर यह लड़की जब चावल खाने लगती है तो खाती ही जाती है। मैंने देखा है कि जब यह चावल अधिक खा जाती है तो इसका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। आप मेम साहिबा को बहुत-बहुत धन्यवाद लिख देना।"

"अच्छा, तो अब मैं जाती हूँ," कहकर कामिनी साड़ी वहीं छोड़कर चल दी।

: १४ :

"तनिक मोटर रोकिये। आओ, उस दुकान में साड़ियाँ देखें। बड़ी सुन्दर बनारसी साड़ियाँ टंग रही हैं," रानी ने महाराज से कहा।

महाराजा उदयसिंह ने मोटर रोक दी और वह कुमार की दुकान में घुस गये।

कुमार खुशी से उछल पड़ा। उसकी दुकान में ताजा-ताजा माल आया था। सब साड़ियां खोल-खोल कर दिखाता गया।

रानी ने दो हज़ार की साड़ियां चुन लीं और अपने पर्स में से सौ-सौ के २० नोट निकाल कर कुमार के हाथ में देते हुए बोली, "देखो, हमें लड़की की शादी के लिये दस हज़ार की अच्छी अच्छी साड़ियां खरीदनी हैं। यदि तुम्हारे पास और अच्छी अच्छी साड़ियां बीस दिन तक आ जायें तो हम तुमसे ले लेंगे।"

"हमारा देहली में बनारसी साड़ियों का अपना कारख़ाना है। मैं आज ही दस हज़ार का आर्डर भेज देता हूँ। आपके पास माल बीस दिन से पहले पहुंचा दिया जायेगा।"

"अच्छी बात है," कहकर रानी चली गई। कुमार आज बहुत प्रसन्न था। झट से दो हज़ार रुपये बैंक में भिजवा दिये और बैंक को लिख दिया, कि आज ही तुरन्त दो हज़ार रुपये का ड्राफ्ट हुक्मचन्द एन्ड सन्स, दिल्ली, के नाम भेज दें।

दिल प्रसन्नता से उछल रहा था। उछल-उछल कर कुमार आज दुकान में गा रहा था और नाच रहा था और दस हज़ार की साड़ियों का आर्डर भी साथ-साथ बनाता जा रहा था। बैंक से ड्राफ्ट आ गया और आर्डर भी बन गया।

जल्दी से लिफाफे में बन्द करके नौकर को उसे डाल देने को कहा।

टेलीफोन पकड़ कर खुशी से बोला, "कामिनी, तुम कहाँ हो जल्दी से आओ—

कुछ हंसेंगे और कुछ खेलेंगे हम,
कुछ पीयेंगे और कुछ पिलायेंगे हम।"

ऐसा टेलीफून सुनकर कामिनी जल्दी से अपने बालों में सुगन्ध लगाकर वहाँ पहुंच गई।

"कामिनी, कामिनी, मेरी प्यारी कामिनी!" कामिनी को सामने खड़ी देखकर कुमार चीख उठा।

"क्या हो गया है आज तुमको?" कामिनी बोली।

"क्या खाओगी? क्या पीयोगी? कह दो, जो कहोगी वही हाजिर कर दूंगा आज।"

"क्या है, आज?" कामिनी ने पूछा।

"तुम बताओ क्या पीयोगे?"

"नहीं, पहले बताओ आज क्या है?"

"कामिनी, आज मार दिया मैदान, महाराजा उदयसिंह की महारानी आज दो हज़ार की साड़ियाँ खरीद कर ले गई और साथ ही दस हज़ार का आर्डर भी दे गई।"

"अच्छा, यह बात है," कामिनी ने अपनी सुराही जैसी गर्दन मोड़ते हुए कहा।

"हम तो आज रम पीयेंगे।"

"रम नहीं, शैम्पेन पीयो आज, कामिनी," कुमार अकड़ कर बोला।

"अच्छा, शैम्पेन ही पिला दो।"

"चलो, फिर होटल में," कुमार ने कहा।

कामिनी ने एक तिरछी नजर से कुमार की ओर देखा और यह समझ कर कि आज इसकी जेब में दो हज़ार रुपये हैं, बोली, "होटल में नहीं, रात को बंगले पर पीयेंगे। वहीं दोनों साथ-साथ खाना खायेंगे, तुम रात को वहीं सो जाना।"

"कामिनी, तुम कितनी अच्छी हो," कुमार ने अपना मुंह कामिनी के कान के पास ले जाकर कहा, और कामिनी ने धीरे से अपने गाल मोड़कर कुमार के होठों पर रगड़ दिये।

कुमार के शरीर में बिजली सी दौड़ गई और वह बोला, "तुम कितनी सुन्दर हो, कामिनी!"

दोनों कुछ देर तक इसी प्रकार आनन्दमग्न रहे।

फिर कामिनी उठकर खड़ी हो गई और बोली, "अच्छा, तो आज बंगले पर शैम्पेन लेकर आ जाना।"

"मैं अवश्य आ जाऊंगा", कुमार ने कहा।

"आज जरा दुकान जल्दी बन्द कर देना। आज तो तुम्हारा खुशी का दिन है। शैम्पेन पी जायेगी," कह कर कामिनी चली गई।

× × ×

कुमार ने आज एक घंटे पहले से ही दुकान बन्द कर दी। दो बोतलें शैम्पेन की खरीदकर, दोनों बगलों में दबाकर, मुँह में सिगरेट डालकर चल दिया कामिनी के बँगले की ओर!

कामिनी ने यह समझकर कि आज कुमार की जेब में दो हज़ार रुपये हैं और वह आज उसको खूब खिला कर, शराब पिला कर, उसकी जेब में से वह दो हज़ार रुपये निकाल लेगी, आज खूब अच्छे-अच्छे खाने बनवाये।

दोनों बगलों में शैम्पेन की बोतलें दबाये हुए, सिगरेट का धुआँ उड़ाता हुआ कुमार कामिनी के बँगले पर जा पहुँचा।

मेज़ पर दोनों बोतलें रखकर, कुमार वहाँ रेशम से मुलायम सोफे पर धड़ाम से बैठ गया।

कामिनी, जिसके पास से आज अद्भुत भीनी-भीनी सुगन्ध आ रही थी, वहाँ उसके पास सोफे पर बैठ गई। मुस्कराते हुए उसने गोल्ड-फ्लेक के डिब्बे में से एक सिगरेट निकाल कर, अपने हाथ से कुमार के मुँह में दबा दिया और लाइटर से जलाकर आप भी सिगरेट पीने लग गई।

दोनों इस प्रकार एक-दूसरे से कुछ दूर सोफे के कोनों पर बैठे हुए सिगरेट पीते रहे और हँस-हँस कर बातें करते रहे। सामने मेज़ पर दो शैम्पेन की बोतलें रखी थीं।

"तो फिर आज तुमने मैदान मार ही लिया," कामिनी ने धुआँ कुमार की ओर फेंकते हुए कहा।

धुआँ जाकर कुमार की आँखों से टकराया और वह अपनी जगह से सरक कर कामिनी के पास बैठ गया और बोला—"यह सब तुम्हारी ही कृपा है।"

इतनी देर में काली भुजङ्गा नन्नी ने भोजन लाकर मेज़ पर लगाना आरम्भ कर दिया। नन्नी कभी अन्दर जाती और कभी बाहर आती। एक-एक प्लेट लाकर उसने मेज़ को भर दिया।

कामिनी छुरी काँटा हाथ में पकड़ कर कुमार से बोली, "शुरू कीजिये।"

कुमार ने छुरी काँटा हाथ में लेकर कहा, "कामिनी, आज तो आपने बड़ा कष्ट किया!"

"सब आपकी कृपा है," कहकर कामिनी ने खाना शुरू कर दिया।

दोनों आपस में मीठी-मीठी बातें करते जाते थे और खाना खाते जाते थे। कामिनी कभी-कभी अपने काँटे में भोजन लगाकर कुमार के मुँह में डाल देती थी और कुमार अपने काँटे में लगाकर कामिनी के मुँह में डाल देता था।

खाना खा चुकने के पश्चात्, कामिनी सिगरेट पीती हुई वहाँ से उठी और मेज़ पर रक्खी दोनों शैम्पेन की बोतलें उठाकर मटकती-मटकती अपने सोने के कमरे की ओर चल दी। कुमार साहब भी उसके पीछे-पीछे चल दिये। कामिनी ने कमरे में घुसते ही अपने आपको रेशम से भी कोमल पलंग पर फेंक दिया। कामिनी एक टाँग पलंग के नीचे और एक टाँग पलंग के ऊपर रखकर, सिर रेशमी तकिये पर रखकर, सिगरेट का धुआँ छत की ओर उड़ाती हुई बड़े नाज़ से कुमार से बोली, "शैम्पेन पिलाओ।"

कुमार ने झट बोतल खोली और दो छोटे-छोटे खूबसूरत गिलासों में डाल दी। और गिलास उठाकर बोला, "लो शैम्पेन पीयो, कामिनी! खूब पीयो।"

"डाल दो मेरे मुँह में," कामिनी ने ग़फ़लत की आवाज़ में कहा।

कुमार ने ऊँचा होकर, शैम्पेन का गिलास कामिनी के खूबसूरत होंठों के साथ लगा दिया।

कामिनी लेटे-लेटे ही सारा गिलास गटक कर गई।

"और लाओ," बोली कामिनी।

कुमार ने दूसरा गिलास भी लेकर कामिनी के होंठों के साथ लगा दिया और वह भी कामिनी लेटे-लेटे ही पी गई।

"और लाओ, खूब पिलाओ। आज तुम्हारी खुशी का दिन है।"

कुमार ने गिलास में और शेम्पेन डाली और गिलास लेकर कामिनी के होंठों के साथ लगा दिया।

कामिनी ने थोड़ा-सा पीया और फिर गिलास अपने हाथ में लेकर नशे की आँखें बना कर बोली—

"तुम नहीं पीयोगे, सारी शराब मुझे ही पिला दोगे ?" कह कर कामिनी उठकर बैठ गई और वह गिलास कुमार के होंठों से लगा दिया।

कुमार ने धीरे-धीरे पी ली।

कामिनी ने दूसरी बोतल खोली और गिलास में डालकर कुमार साहब को खूब पिलाई।

कुमार नशे में चूर हो गया और वहीं पलंग पर लेट गया और बकने लगा—"मेरी प्यारी कामिनी, मेरी प्यारी कामिनी, अपने होंठों से शराब पिलाओ, हाथों से नहीं, होंठों से शराब नहीं पिलातीं, अच्छा तो अपने मुँह में शराब डालकर, मेरे मुँह में डाल दो।"

फिर कुमार हाथ हिलाते हुए बोला, "कामिनी, मैं शराब नहीं पीता ! तुम पीओ। तुम नहीं पीतीं ! तो लाओ अच्छा मुझे ही पिला दो।"

कामिनी ने अपनी अलमारी खोली और दो बोतलें शराब की

और निकाल लाई। दोनों बोतलें उसने कुमार को पिला दीं। कुमार दोनों बोतलें पीकर मरे आदमी की तरह पलंग पर लेट गया। न ही उसके मुँह से कुछ निकला और न ही उसका हाथ ही हिलता था।

कामिनी ने देखा, अब मामला ठीक है। उठ कर लगी उसकी जेबें टटोलने। एक जेब टटोली, दूसरी जेब टटोली; कोट की जेब देखी, पतलून की देखी पर कुछ हाथ न लगा। क्रोध में आ कर, मेज़ पर रखी, घन्टी पर ज़ोर से हाथ मार कर चिल्लाई, "नन्नी!"

नन्नी घबराती-घबराती, दौड़ी-दौड़ी, पास आकर खड़ी हो गई।

"नन्नी, कहीं यहाँ रुपये तो नहीं गिर गये?"

नन्नी कमरे में इधर-उधर नज़र दौड़ा कर बोली—"नहीं मालकिन, यहाँ तो कहीं नहीं गिरे।"

"तो कहाँ चले गये?" कामिनी ने पूछा।

"कैसे रुपये मालकिन?" नन्नी ने घबराते हुए पूछा।

"अरी इस मूर्ख के पास दो हज़ार रुपये थे।"

नन्नी जो पहले घबराई हुई थी अब हँस कर बोली—

"मालकिन यह व्यापारी है, व्यापारी, कोई दफ्तर के बाबू नहीं। यह व्यापार करते हैं। दो बोतलें ला कर, देखो कितनी पी गया। और इसके इलावा तुम्हारी दो बोतलें भी डकार गया और अपनी भी पी गया। देखो न कैसा मज़े से लेटा है। स्वर्ग का आनन्द ले रहा है, इस समय यह।"

"उतार दो इसके कपड़े," जल-भुन कर क्रोध में कामिनी ने कहा।

नन्नी ने कुमार के सब कपड़े उतार दिये। और कर दिया नंगा उसने उसको!

"ढूँढ़ो, इसकी एक-एक जेब", कामिनी ने गरज कर कहा।

नन्नी ने एक एक जेब ढूँढ मारी पर रुपये कहीं न मिले। आखिर में एक सिगरेट की डिबिया और एक दियासलाई निकाल कर उसने कामिनी के सामने मेज़ पर रख दी और कहा, "यह है सब सम्पत्ति इनकी जेब की, मालकिन।"

कामिनी ने फिर कहा, "पर लाया ज़रूर था अपने साथ दो हज़ार रुपये!"

"तो फिर कहीं इधर-उधर इसने रख दिये होंगे। प्रातः पूछ लेंगे। सोने दो अब इसको। रात के दो बजे आते हैं," नन्नी बोली।

"पड़ा रहने दो इसे यहाँ ऐसे ही," कहा कामिनी ने और बची खुची शराब वाली बोतल ले कर, पी कर, कपड़ा ओढ़ कर उदासी में सो गई।

कामिनी ने बची-खुची शराब तो ज़रूर पी ली थी, कि वह आराम से सो जायेगी पर उसका ध्यान कुमार साहब के दो हज़ार रुपयों की ही ओर था। जो उसको महाराज उदयसिंह की महारानी दे गई थी। रात करवटें बदलते-बदलते बेचैनी में काटने लगी। कभी-कभी कामिनी भ्रम में होकर, अपने पलंग से उठती और फिर से कुमार साहब की जेबें टटोलने लगती कि सम्भवतया कहीं से रुपये मिल जाएं।

नींद नहीं आती थी। क्रोध में मेज़ पर रक्खी हुई घन्टी पर दो-तीन बार ज़ोर-ज़ोर से हाथ मार कर बोली, "नन्नी, जल्दी से इधर आ।"

नन्नी जो बाहर खटोले पर पड़ी सो रही थी, एक दम उठ

कर कामिनी के पास आ गई और बोली, "क्या हुआ मालकिन ?"

"नींद नहीं आती नन्नी। शराब पिलाओ।"

नन्नी ने अलमारी से बोतल निकाल कर, कामिनी के पास पलंग पर बैठकर, धीरे-धीरे सारी बोतल पिला दी।

आखिर गिलास में थोड़ी सी शराब छोड़ कर, गिलास मेज पर रख कर, कामिनी कटे आदमी की तरह, तकिये पर सिर फेंक कर सो गई और सोते ही खो गई।

नन्नी ने देखा कि कामिनी तो अब सो गई है। गिलास की बची हुई शराब अपने मुँह में डाल कर, बिजली बुझा कर, बाहर जाकर अपने खटोले पर सो गई।

वह दोनों इस प्रकार शराब पीकर सो गईं और खो गईं।

: १५ :

सोते-सोते सवेरा हो गया। टट्टी के पास एक कोने में से कामिनी के मुर्गों ने प्रात: की आवाज लगाई।

नन्नी ने झट अपना खटोला उठा कर दीवार के साथ लगा दिया। वैसे तो नन्नी मुर्गे की आवाज़ से पहले ही उठ जाती थी, पर आज उसे भी दो हजार रुपयों की खोज ने देर कर दी थी। उसे प्रातः उठ कर आग जलानी होती थी और कामिनी को बिस्तरे पर ही चाय पिलानी होती थी।

नन्नी ने जल्दी-जल्दी आग जला दी और उस पर चाय का पानी रख कर, वह कुमार साहब के पास अन्दर कमरे में गई।

कुमार साहब आराम से नंग-धड़ंग सोये हुए थे! उनकी रजाई पलंग से नीचे गिरी पड़ी थी। इतनी बोतलें शराब की पेट में चले जाने के बाद कैसे वह प्रातः उठ सकता था? स्वर्ग में घूम रहा था कुमार इस समय लेटे-लेटे!

“सोते रहो!” कहती हुई नन्नी कमरे से बाहर हो गई। और थोडी देर में ट्रे में चाय लेजा कर कामिनी के कमरे में मेज़ पर रख दी।

धीरे से घंटी पर हाथ मार कर नन्नी बोली, “उठो मालकिन, सवेरा हो गया।”

कामिनी न हिली न जुली। कई बार नन्ही ने फिर जोर-जोर से घंटी पर हाथ मारे।

"क्या है री नन्नी। क्यों घंटी बजा रही है?"

"मालकिन, सवेरा हो गया। चाय लाई हूँ।"

"वह दो हजार रुपये क्या मिल गये?"

"नहीं मालकिन, रुपये तो नहीं मिले। चाय लाई हूँ। उठकर पीलो।"

"नहीं पीती चाय," कामिनी ने ग़फलत से करवट बदलते हुए कहा।

"विचित्र संकट है। चाय ठंडी होती जाती है और मालकिन आज उठने में ही नहीं आती," बड़बड़ाने लगी नन्नी।

फिर कुछ सोच कर आहिस्ता से उसने घंटी पर हाथ मारा।

"क्या है री?" कामिनी ने तंग आकर कहा।

"मालकिन, दो हजार रुपये मिल गये! पलंग के नीचे गिरे पड़े थे।"

'दो हजार रुपये मिल गये,' सुनकर कामिनी ने अपने ऊपर से रजाई उतार कर फेंक दी और एकदम से उठ कर बोली? "कहाँ पड़े थे रुपये?"

नन्नी ने कामिनी के उठते ही चाय का प्याला उसके आगे कर दिया।

कामिनी ने चाय का प्याला पकड़ लिया, और चाय का एक गर्म-गर्म घूंट पीकर प्याला प्लेट में रखते हुए बोली, "ला, वह रुपये मुझको दे दे," कहकर वह गर्म-गर्म चाय पीने लगी।

चाय पीकर वह फिर बोली, "अरी ला, वह दो हजार रुपये मुझको दे दे।"

नन्नी ने चुपचाप केतली में से चाय प्याली में डाल दी और कामिनी चाय पीने लगी।

गर्म-गर्म चाय पीकर कामिनी की नींद खुल गई और वह मेज पर प्याला रख कर फिर बोली—

"अरी, वह रुपये क्यों नहीं देती तू मुझे?"

नन्नी खाली प्याली ट्रे में रखकर बोली, "लाती हूँ, अभी कुमार साहब से दो हजार रुपये। एक बार फिर जाकर उनकी जेब टटोलती हूँ। सम्भव है कि कहीं अटके हुए मिल जायें," कहती-कहती नन्नी ट्रे लेकर चली गई।

कामिनी अब समझ गई कि यह नन्नी सब उसे उठाने का बहाना कर रही थी और वह रुपये इसे अभी नहीं मिले। सोचने लगी और सोचने लगी। सोचते-सोचते स्वतः ही बोली, "रुपये दो हजार जरूर इसके पास हैं। पर इसने कहीं छिपा रक्खे हैं। अच्छा, तो ऐसे सोचने से क्या लाभ। इन व्यापारियों से रुपया इनको खुश करके ही लिया जा सकता है। नशे की हालत में यह हजारों रुपये पानी की भाँति बहा देते हैं। यदि इनसे कोई होश में बात करे तो पाई-पाई का हिसाब करने लगते हैं और जो कोई अधिक बात करे तो पल-पल का सूद गिनने लगते हैं। अच्छा, तो मैं भी आज कुमार साहब को खुश करके इनसे रुपया ऐंठती हूँ," कहकर कामिनी अपने पलंग से उठ खड़ी हो गई।

बाहर आकर नन्नी से बोली, "नन्नी, तू अपना लियूट लेकर कमरे में चल। मैं अभी स्नान करके आती हूँ। कुमार साहब के पास नाचना है।"

"लेकिन, वह तो अभी मरे आदमी की तरह पड़ा है," नन्नी ने कहा।

"अरी पगली, पैरों की झंकार, सितारों की छनछनाहट से हम कुमार साहब को जगाएंगे। फिर, मैं प्यार और मुहब्बत से उसकी गर्दन में हाथ डाल कर, उससे वह दो हज़ार रुपये ऐंठूंगी," कहती हुई वह स्नानागार में घुस गई।

मालकिन भी विचित्र है। वह समझती है सम्भवतया कुमार साहब ने यहाँ आने से पूर्व ही रुपये निगल कर अपने पेट में छिपा रक्खे हैं। अब यह उसके सामने नाच कर उससे रुपये निकालना चाहती है और मैं कहती हूँ कि वह केवल दो बोतलें शैम्पेन की ही लेकर यहाँ आया था। रुपये लाया ही नहीं।

कामिनी ने स्नानागार से निकल कर अपने बालों को फटकारा और रेशम की साड़ी पहन कर दर्पण के सामने कंघे से अपने बाल ठीक करने लगी। उनमें सुगन्ध लगा कर, मेज़ पर पैर रख कर उसने पैरों में घुंघरू बांध लिये और कुमार साहब के कमरे की ओर चल दी।

नन्नी वहाँ पहले से ही अपनी लियूट लेकर एक दूध सा सफेद लम्बा गाऊन पहने वहाँ खड़ी थी।

कामिनी पैरों के घुंघरूओं को बजाती हुई कमरे में घुसी और नन्नी ने भी अपने लियूट की तारें खींचनी आरम्भ करदीं।

कामिनी वहाँ खूब पैर मार-मार कर नाच रही थी और नन्नी छन-छन की आवाज़ तारों को खींच-खींच कर निकाल रही थी।

छनछनाहट की आवाज़ सुन कर कुमार साहब जाग पड़े। उन्होंने बिस्तरे पर लेटे-ही-लेटे बेहोशी में एक आँख खोल कर कामिनी की तरफ़ फेंकी और नाच का आनन्द लेने लगे।

कामिनी ने कुमार साहब को जगा देख कर और ज़ोर-ज़ोर

से नाचना आरम्भ कर दिया। नन्नी ने भी अपनी लियूट की तारें जल्दी-जल्दी खींचनी आरम्भ करदीं। आखिर कुमार साहब ने अपनी नींद खोली और पलंग पर बैठ कर कामिनी की ओर देखने लगे।

कामिनी नाचती रही और नाचती रही!

"कामिनी," होश में आकर कुमार ने पुकारा।

कामिनी नाचती-नाचती कुमार साहब के पास आकर पलंग के पास गिर गई। प्यार और मुहब्बत से उसने अपनी बाहें कुमार की गर्दन में डाल दीं और अपने बदन को स्वतन्त्र छोड़ दिया।

कुमार ने भी आज इस प्रकार कामिनी को स्वच्छन्द पाकर उसको अपने दोनों हाथों में कस कर पकड़ लिया।

"कुमार", कामिनी ने अपना गाल कुमार साहब के गाल से रगड़ते हुए कहा।

"कामिनी! मेरी प्यारी कामिनी," कुमार ने कामिनी को अपने दोनों हाथों में कस कर कहा।

"मेरे प्यारे कुमार," कामिनी ने अपना हाथ कुमार की ठोड़ी पर फेरते हुए कहा—"मैं तुमसे कितना प्रेम करती हूँ, तुम नहीं जानते।"

"मैं जानता हूँ, कामिनी।"

कामिनी ने समझा, तीर ठीक बैठ गया। अपनी दोनों बाहें, कुमार साहब की गर्दन से खींच कर, अपना उदास मुँह, कुमार की गोद में डाल कर बोली, "तुम नहीं जानते कि मैं कितनी दुःखी हूँ।"

"तुम्हें क्या दुःख है?" कुमार ने उसका मुँह अपने हाथ से ऊँचा करके पूछा।

कामिनी ने अपनी मदभरी आंखें कुमार की नशीली आंखों में गड़ा कर कहा—

"मेरी मुहब्बत! आप नहीं जानते मुझे रातों नींद नहीं आती। मुझे चार हज़ार रुपये की आवश्यकता है," कहकर कामिनी कुमार साहब की गोदी में सिर रखकर रोने लगी।

कामिनी के मुँह से ऐसी बातें सुन कर, कुमार साहब के अन्दर उदासी छा गई। वह कामिनी के गोरे-गोरे मुलायम हाथ पकड़ कर बोलाः—

"ना रो कामिनी, ना रो!"

"मुझे रुपये की आवश्यकता है और आप कहते हैं ना रो। क्यों नहीं ला देते मुझे रुपये कहीं से! मैं आपको ब्याज समेत भुगता दूंगी।"

"नहीं कामिनी, ऐसा न कहो। मेरे पास इस समय रुपये नहीं हैं। नहीं तो मैं तुम को अवश्य लाकर दे देता। जैसे रुपये मेरे पास, वैसे आपके पास।"

"झूठ बोलते हैं आप मुझसे! अभी तो आज ही आपको महारानी दो हज़ार रुपये देकर गई हैं।"

"कामिनी, वह रुपये तो मैंने दस हज़ार के आर्डर के साथ देहली भेज दिये। तुम पहले मांगतीं तो मैं अवश्य आपको वह दो हज़ार रुपये दे देता। अब मैं तुमको दस दिन पश्चात्, महारानी को साड़ियाँ बेच कर दे दूंगा।"

खिंच गईं भौंहें सब कामिनी की यह सुन कर! अब वह समझी कि कबूतर हाथ से उड़ चुका है। खड़ी हो गई पलंग से

कामिनी, और कुमार साहब के उतरे हुए कपड़े, उसके ऊपर फेंक कर बोली—"लो, जल्दी से यह कपड़े पहन लो। तुम्हें दुकान पर देर हो रही है।"

कुमार जो अब होश-हवाश में था अपने आपको इस प्रकार नंग-धड़ंग देख कर कामिनी से पूछने लगा, "कामिनी, यह मैं नंग धड़ंग कैसे पड़ा था।"

"हम आपके कपड़े बेचने जा रही थीं," हंस कर बोली कामिनी।

"बेचने जा रहे थे। क्यों ?" कुमार ने पूछा।

"बेचने जा रहे थे। अजी हमने क्या आपके कपड़े बेचकर कोई मोटर खरीदनी थी। श्रीमान् जी, रात को जब आप चार बोतलें पी गये, तो आपने अश्लीलता की वह प्रलय मचादी कि बस भगवान् ही रक्षा करे। चार बोतलें पीने से आपको इतनी गर्मी चढ़ गई कि आपने सारे कपड़े उतार कर फेंक दिये," कहकर हंसने लगी कामिनी।

"चलो जल्दी चलो, ग्यारह बज गये हैं। आपको दुकान पर देर हो गई।"

"कामिनी, दुकान तो बहुत दूर है। पैदल कैसे जाऊँगा," कहा कुमार ने।

फेंक दिया एक पांच का पत्ता निकाल कर कामिनी ने कुमार के सामने और आगे के लिए कबूतर को अपने ही हाथ में रक्खा।

हंसते-हंसते कुमार ने उठा लिया पांच का वह नोट और जेब में डाल कर कामिनी से कहने लगा—"कामिनी, चिन्ता न करो।

दस-बारह दिन में मेरे पास दस हाज़र रुपये आने वाले हैं और मैं तुम्हारे सब काम ठीक करा दूंगा।"

"आप पर मुझे बड़ा भरोसा है," कहा कामिनी ने।

चला गया कुमार कामिनी की यह बात सुनकर और पहुंच गया अपनी दुकान पर।

: १६ :

सावन फूट पड़ा। सारी रात निरन्तर वर्षा होती रही। प्रातः होने पर तनिक वर्षा थमी। प्रभुदयाल प्रातः ही अपनी मोटर में बैठ कर कार्यालय पहुँच गया और मेज़ पर बैठ कर लिखने लग गया।

एक लम्बी-सी सुन्दर कार कार्यालय के सम्मुख आकर खड़ी हो गई और उसमें से एक अधेड़ स्त्री और एक तरुण युवती उतरे और भीतर जाने लगे।

चौकीदार ने उनको द्वार पर ही रोक दिया।

"भीतर नहीं जा सकते," चौकीदार ने अपना मोटा लठ उन दोनों के आगे अड़ा कर कहा।

"अरे भैय्यन, हमने प्रभुदयाल से मिलना है।"

"उनसे स्त्री का मिलना मना है।"

"अरे, हम तो उसके सम्बन्धी हैं। दिल्ली से मिलने आये हैं।" फिर उस अधेड़ स्त्री ने अपने बटुये में से एक दस का नोट निकाल कर कहा—"यह लो अपनी बख्शीश। फिर कभी आवेंगे तो फिर देंगे।"

चौकीदार ने अपना डंडा हटा दिया, और वह दोनों प्रभुदयाल के कमरे में चली गईं।

"नमस्कार", दोनों ने हाथ जोड़कर कहा, और जल्दी से प्रभुदयाल के सामने कुर्सियों पर बैठ गईं।

"कहिये, कैसे आना हुआ?" प्रभुदयाल ने उन दोनों को देख कर, चकित होकर पूछा।

"ऐसे ही आपकी कविता की बहुत प्रशंसा सुनी है। चले आये आप से मिलने। यह मेरी बच्ची है। कविता में बहुत रुचि रखती है; कहने लगी—प्रभुदयाल से मिलना है।"

प्रभुदयाल ने आंख उठा कर उस लड़की को देखा तो उस युवती ने आंखें मटकाते हुए कुछ हंस दिया।

रूप भी क्या अजीब चीज़ है। प्रभुदयाल उस लड़की की सुन्दरता पर अपनी आँखें अटका बैठा, और बोला, "कैसी लगती हैं आपको, मेरी कविता?"

"बहुत अच्छी," युवती ने गर्दन हिलाते हुए ज़रा मुस्कराते हुए कहा।

"अच्छा, तो आप भी कविता करती हैं?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"कुछ थोड़ा बहुत कर लेती हूँ," लड़की ने अपनी उंगलियाँ नचाते हुए, हँसते हुए कहा।

"अपनी कविता दिखाने ही तो ये आपके पास आई है। बेटी, दे दो अपनी कविता सम्पादक जी को। ठीक कर देंगे तुम्हारी कविता।"

युवती ने अपने बैग में से एक लिफ़ाफा निकाल कर मेज़ पर रख दिया।

प्रभुदयाल ने अपना हाथ बढ़ाकर लिफ़ाफे को उठाना चाहा।

प्रभुदयाल का हाथ अभी लिफ़ाफ़े पर ही था कि उस युवती ने धीरे से अपना कोमल हाथ प्रभुदयाल के हाथ पर रख दिया, और हँसती-हँसती आँखें मटकाती हुई, गर्दन हिलाती हुई प्रभुदयाल से बोली—"मुझे लाज आती है। जब मैं चली जाऊँ तब मेरी कविता पढ़ लेना।"

"नहीं, इसमें लज्जा की क्या बात है?" प्रभुदयाल ने कहा।

पर, उस जवान लड़की ने अपना हाथ प्रभुदयाल के हाथ पर से नहीं उठाया और वह प्रभुदयाल से 'नहीं-नहीं' कहती रही, हँसती रही और आँखें लड़ाती रही।

"अच्छा बेटी, तुमको लज्जा आती है तो चलो फिर," उस अधेड़ औरत ने कहा। और वह लड़की कमर लचकाती हुई, आँखें मटकाती हुई वहाँ से उठ खड़ी हुई। हाथ जोड़ कर के वह दोनों कमरे से बाहर चली गईं।

उन दोनों के चले जाने के पश्चात् प्रभुदयाल उसके स्पर्श का ध्यान करने लगा। और भूल गया वह लिफ़ाफा वहाँ से उठाना।

थोड़ी देर पश्चात् प्रभुदयाल ने वह लिफ़ाफा उठाया और उसको खोला। हैरान हो गया, वह लिफ़ाफा खोल कर। लिफ़ाफे में सौ-सौ के बीस हज़ार के नोट थे। इतना रुपया देख कर उसकी आँखें चुँधियाँ गईं। मस्तिष्क चकरा गया और अपने आप से कहने लगा, "कहीं बिचारी गल्त लिफ़ाफा तो मुझे नहीं दे गई। कितनी रूपवती थी वह लड़की! कौन थी वह लड़की, जो आई भी और चली भी गई।"

वर्षा अभी हो रही थी। शान्ता ने आज वर्षा रुकने की प्रतीक्षा नहीं की। वह जानती थी कि सम्पादक अवश्य दफ्तर पहुँच गये होंगे। उसने टैक्सी मंगवाई और रेशम की कोमल साड़ी पहनी,

बालों में सुगन्ध लगा कर, फूल लगा कर, बरसाती ओढ़ कर, टैक्सी में बैठ कर पहुँच गई सम्पादक के दफ्तर।

धीरे से दरवाज़ा खोल कर शान्ता बरसाती ओढ़े कमरे में आ गई। बरसाती उतार कर उसने कुर्सी पर रख दी। बीच से सौन्दर्य्य की अप्सरा रेशम की कोमल साड़ी पहने हुए निकल आई।

प्रभुदयाल जिसके हाथ में वह लिफ़ाफ़ा पकड़ा हुआ था, और जो कुछ सोच रहा था, शान्ता के अन्दर आने पर उठ कर स्नानागार में चला गया।

शान्ता प्रभुदयाल का इस प्रकार से उठ कर जाना न समझ सकी। वर्षा ज़ोर-ज़ोर से होने लगी। दफ्तर में अभी कोई भी नहीं आया था। शान्ता ने कमरे की सामने वाली खिड़की का पर्दा हटा दिया। वर्षा की बौछार पड़ रही थी। शान्ता का कलेजा उड़ गया और उसके मुँह से सहसा निकल पड़ा—सावन आया, पर तुम चले गये!

पंखे को तेज़ कर के जब शान्ता अपनी मेज़ पर बैठी तो हाथ लगाने से पता चला कि वर्षा की बून्दों से उसका जम्पर कुछ गीला हो गया है। उत्साहित हो कर उसने कमरे का किवाड़ बन्द कर दिया। अपना गीला जम्पर, झट उतार कर, वहाँ पंखे के नीचे सूखने के लिये रख दिया और अपने शरीर को चारों तरफ से रेशम की साड़ी से लपेट कर बैठ गई और काम करने लगी। प्रभुदयाल ने स्नानागार में जा कर फिर लिफ़ाफ़ा खोला और फिर नोट गिनने लगा। गिनता गया और गिनता गया। नोट गिनते-गिनते उसके बीच में से एक छोटा-सा पत्र निकला—जिस पर लिखा था, "यह सब रुपया आप की भेंट है। आपकी कविता 'रस और भौरे' का पुरस्कार।"

इतना बड़ा पुरस्कार एक छोटी-सी कविता पर ! कौन थी वह लड़की ! कितनी सुन्दर थी, कितनी अच्छी थी। ज़रूर कोई महारानी होगी। महाराजा लोग तो तनिक-तनिक सी बात पर हज़ारों रुपया पानी की भाँति बहा देते हैं। प्रभुदयाल जेब में रुपये का लिफ़ाफ़ा डाल कर प्रसन्नता से बाहर आ गया। आज उसका दिल उछल रहा था। जेब में रुपये की गर्मी से उसका मन वासना की ओर फिर गया। बाहर आकर उसने शान्ता पर आँख फेंकी। शान्ता पीठ किये बैठी थी। बालों में सुन्दर मोतियों के पुष्प खिल रहे थे।

प्रभुदयाल धीरे से आ कर शान्ता के पीछे खड़ा हो गया।

शान्ता समझ तो गई कि उसके पीछे प्रभुदयाल खड़ा है पर हिली-जुली नहीं।

प्रभुदयाल ने धीरे से शान्ता के बालों से एक मोतिये का पुष्प तोड़ लिया। शान्ता जो अपने नंगे बदन को साड़ी से लपेटी, साड़ी का एक पलड़ा पकड़े, नीचे गर्दन किये बैठी थी, धीरे से हाथ का वह पलड़ा उसने छोड़ दिया। दोनों कन्धे नंगे हो गये। प्रभुदयाल की वासना भड़क उठी, उसके सुन्दर, गोल-गोल, गोरे-गोरे कन्धे देख कर ! धीरे से उसने शान्ता के कन्धे पर हाथ रख दिया।

शान्ता तनिक न हिली। प्रभुदयाल के स्पर्श से उसका दिल धक्-धक् करने लगा और उसने अपनी गर्दन मेज़ पर डाल दी। गोल-गोल कन्धे सारे नंगे हो गये।

"शान्ता"—प्रभुदयाल ने धीरे से पुकारा और उसकी दोनों बगलों में हाथ डाल कर उसको उठा लिया।

शान्ता उठ कर खड़ी हो गई। शरीर में लपेटी हुई साड़ी पंखे

से उड़ कर नीचे गिर गई और उसकी छातियाँ केवल एक रंगदार अंगिया से बंधी नज़र आने लगी।

"शान्ता ! कहाँ गया तुम्हारा जम्पर ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"बारिश में गीला हो गया था। पंखे के नीचे सूख रहा है ?" कह कर शान्ता प्रभुदयाल के पास चिपट कर खडी हो गई।

"बड़ी बारिश हो रही है," प्रभुदयाल ने कहा।

"पर कलेजे में तो आग सुलग रही है," कह कर शान्ता ने प्रभुदयाल के सीने में अपना सिर फेरना आरम्भ कर दिया।

प्रभुदयाल को कामदेव ने आ घेरा। उसने शान्ता की ढोड़ी ऊँची करके कहा, "कितनी सुन्दर लग रही हो आज तुम, शान्ता !"

शान्ता ने झट प्रभुदयाल की कमर में दोनों हाथ डाल दिये और बोली, "तुम कितने अच्छे हो।"

बिना परिश्रम के बीस हज़ार रुपया प्रभुदयाल की जेब में आ जाने से उसकी वासना भड़क उठी। उसने शान्ता को गोदी में उठा लिया। और पास ही सोफे पर लेजा कर बैठा दिया।

शान्ता ने कौली भर कर प्रभुदयाल को अपने पास गिरा लिया और बोली, "महाप्रभु, तुम कितने प्रिय हो। तुम्हारी कविता कितनी सुन्दर है," कह कर शान्ता ने प्रभुदयाल को अपने पास खींचना शुरू कर दिया।

बाहर द्वार पर किसी ने थपकी दी।

प्रभुदयाल डर कर परे हटने लगा।

"कोई नहीं। लिली होगी चली जायेगी। दरवाज़ा बन्द है,' कह कर शान्ता ने प्रभुदयाल को जोर लगा कर अपने पास खींचना शुरू कर दिया।

"छोड़ दो मुझे, शान्ता! बाहर कोई खड़ा है," प्रभुदयाल ने कहा और शक्ति लगा कर शान्ता से हाथ छुड़ाने लगा।

हाथ छुड़ा कर वह बैठ गया।

शान्ता ने प्रभुदयाल को फिर कसकर पकड़ लिया और अपने पास खींचकर बोली, "लिली थी वह चली गई।"

द्वार पर अब की बार ज़ोर-ज़ोर का धमाका और साथ ही साथ ज़ोर की आवाज़ आई, "द्वार खोलो!"

हाथ पाँव सो गये शान्ता के बाहर सेठ जी की आवाज सुन कर! और वह प्रभुदयाल से बोली, "तुम स्नानागार में चले जाओ! सेठ जी के अन्दर आने पर आ जाना, मैं द्वार खोल देती हूँ।"

प्रभुदयाल स्नानागार में चला गया और शान्ता ने द्वार खोल दिया।

झुंझलाते हुए सेठ जी अन्दर आ गये! और शान्ता से पूछने लगे, "क्या कर रहे थे तुम लोग! कहाँ है, प्रभुदयाल?"

"वर्षा से कपड़े गीले हो गये थे, उनको ठीक कर रही थी। स्नानागार में गये हैं सम्पादक जी," शान्ता ने कहा।

इतने ही में प्रभुदयाल अपना मुँह पोंछता वहाँ पर आगया।

"सुना है नगर की प्रसिद्ध वेश्या यहाँ आई थी! कहती थी कि मैं प्रभुदयाल की सम्बन्धिन हूँ! क्या तुमने बुलवाया था उसे यहाँ?" डाँट कर पूछा सेठ जी ने प्रभुदयाल से।

घबरा गया प्रभुदयाल सेठ जी के मुख से 'वेश्या' का शब्द सुनकर और फिर सम्भलकर बोला—"मेरे पास तो कोई वेश्या नहीं आई। मैं तो वेश्याओं के विरुद्ध लेख लिखता हूँ। यहाँ वेश्या का क्या काम?"

आई ज़रूर थीं कोई स्त्रियाँ प्रातः ही! चौकीदार कहतबोल कि दो स्त्रियाँ थीं। एक प्रौढ़ और दूसरी तरुण युवती थी। कहतीं थीं हम प्रभुदयाल के सम्बन्धी हैं। दस का नोट दे गई हैं वह चौकीदार को। लम्बी सी कार में वह आई थीं! ज़रूर वह वेश्यायें ही होंगी! तुम्हें तो कुछ नहीं दे गई?" पूछा सेठ जी ने।

थर-थर कांपने लगा इतना बड़ा सम्पादक सेठ जी के मुँह से यह बात सुन कर। वही सम्पादक जिसने अपने एक ही लेख से सारे नगर में तहलका मचा दिया था आज उसके अपने पैरों-तले की भूमि खिसकती जा रही थी। यह सोचकर कि यदि सेठ जी ने उसी क्षण उसकी जेबें टटोलीं, तो वह अवश्य ही पकड़ा जायेगा।

"सेठ जी, वह तो मेरी सखी थी और उसके साथ में जो प्रौढ़ स्त्री थी वह उसकी माँ थी। कहती थीं—हमें प्रभुदयाल की कविता बहुत पसन्द है," शान्ता झट से बोल उठी।

"क्यों रे, तूने उनसे दस रुपये क्यों लिये? ला छोड़, मैं उन्हें वापिस कर दूँगी। नहीं तो वे कहेंगी कि तुम्हारे चौकीदार रिश्वत लेते हैं," शान्ता ने इस प्रकार बात बनाकर कहा।

चौकीदार ने रोते-रोते कहा—"मैंने उनसे माँगे थोड़े ही थे। उन्होंने अपने-आप ही निकाल कर मेरे हाथ में पकड़ा दिये।

"चल बेइमान कहीं का," शान्ता बोली।"

शान्ति आगई सेठ जी को, शान्ता की यह बात सुनकर और बोले, "देखो शान्ता, अपनी सहेलियों से कह दो कि वह घर प रही मिल लिया करें। नहीं तो कभी धोका देकर यह वेश्याएं हम सब पर कामदेव का झुरलू फेर जायेंगी। बड़ी भयानक होती हैं यह काम-वासना की कुतियाँ," कहकर सेठ जी अपनी लकड़ी उठाकर बाहर चले गये।

सेठ जी के बाहर चले जाने पर प्रभुदयाल की जान में जान आई और वह शान्ता से बोला—

"शान्ता, तुमने आज मेरी जान बचा दी !"

"क्या किया है मैंने ?"

"शान्ता, मेरे पास आओ ! शान्ता तुमने आज वह कार्य किया है जो अन्य कोई भी प्राइवेट सेक्रेट्री नहीं कर सकती।"

"मुझे प्राइवेट सेक्रेट्री मत कहो ?" मुँह बनाकर शान्ता बोली—"क्या किया है आपने कभी 'प्राइवेट' काम मेरे साथ ? क्या मुझे कभी कोई अपनी प्राइवेट बात बताई है ?"

"ऐसा न कहो शान्ता, तुम मेरी प्राइवेट सेक्रेट्री से भी बढ़कर हो। तुमने मेरी आज जान बचाई है," और फिर प्रभुदयाल ने अपनी जेब में से वह रुपयों का लिफ़ाफा निकालकर शान्ता के आगे रख दिया और बोला—"यह देखो शान्ता ! वह वेश्या जिसको तुमने अपनी सखी कहकर मुझे बचा लिया, आज यहाँ आई थी और यह लिफाफा यहाँ रख गई है। मुझसे कहती थी कि एक कविता ठीक करवानी है। और जब मैंने यह लिफाफा उठाना चाहा, तो उसके ऊपर उस जवान लड़की ने अपना हाथ रख दिया और कहने लगी—"मुझे शर्म आती है; जब मैं चली जाऊँ तो पढ़ लेना।"

"तो तुमने उसकी कविता भी अवश्य ठीक कर दी होगी ! लड़की तो बड़ी सुन्दर है। हज़ारों रुपये फेंक जाते हैं दीवाने उसके पास," शान्ता ने अब भली प्रकार खुलकर कहा।

"नहीं शान्ता, मुझे तो पता ही न चला कि वह वेश्या है, नहीं तो मैं यह रुपया कभी भी न लेता। अब तू ही बता क्या करूं ? तू मेरी प्राइवेट सेक्रेट्री है," प्रभुदयाल ने कहा।

शान्ता ने समझा कि अब चिड़िया हाथ में है। झट बोल उठी—

"मुझे प्राइवेट सेक्रेट्री न कहो। मैं केवल तुम्हारी सेक्रेट्री हूँ। प्राइवेट सेक्रेट्री तो आपकी लिली है।"

"नहीं शान्ता, तुम मेरी प्राइवेट सेक्रेट्री हो," कहकर खींच लिया प्रभुदयाल ने शान्ता का हाथ अपनी ओर और बोला, "प्रतिज्ञा करो कि मेरी बात तुम किसी से भी नहीं कहोगी।"

शान्ता अब बेधड़क होकर अपनी दोनों बाहें प्रभुदयाल की गर्दन में डालकर बोली— "मैं प्रण करती हूँ कि आपकी कोई बात किसी से कभी नहीं कहूंगी," कहकर शान्ता ने आगे बढ़कर अपने होंठ प्रभुदयाल के होंठों पर रगड़ दिये।

प्रभुदयाल कुछ न बोला और उसने अपने दोनों हाथों से शान्ता को कसकर दबा लिया और उसके मुँह पर चुम्बनों की वर्षा बरसा दी।

बाहर से किसी ने द्वार पर थपकी दी, और प्रभुदयाल ने शान्ता को छोड़ दिया। शान्ता ने उठकर द्वार खोल दिया और लिली अन्दर आगई।

दोनों लड़कियाँ अपने-अपने स्थान पर जाकर बैठ गईं और अपने-अपने काम में लग गईं।

बड़ी 'चू चू' की आवाज़ आ रही थी कमरे में से! मालूम होता है कमरे में चूहे बहुत हो गये हैं," लिली बोली।

लिली की यह बात सुनकर शान्ता हँस पड़ी और बोली— "इस चूहे को पकड़ने के लिए तू कहीं से चूहेदान ला।"

"चूहा जब तेरे चूहेदान में आ गया है तो मुझे कहती है कि

चूहेदान ला। वह देख! चूहा अभी-अभी तेरे चूहेदान में उछल कर घुसा है," लिली ने कहा।

शान्ता ने जो दृष्टि उठा कर देखा तो वास्तव में चूहा कोने में तार के चूहेदान में इधर-उधर दौड़ रहा था और 'चू-चू' कर रहा था।

"चू! चू!! चू!!!"

"यह 'चू-चू' की आवाज़ कहाँ से आ रही है," प्रभुदयाल बोला।

"श्रीमान् जी, जब आप की कलम चलती है तो 'चू चू' की आवाज़ करती है। जरा निब नकली नज़र आती है।"

प्रभुदयाल अपने फौन्टेन पेन की निब देखने लगा।

"चू! चू!! चू!!!"

"कलम तो मेरी चल नहीं रही तो फिर 'चू-चू' की आवाज़ क्यों आ रही है?"

"यह लिली के चूहेदान में एक चूहा आ कर घुस गया है," शान्ता ने हँस कर कहा।

"मेरा चूहेदान थोड़े ही है यह। चूहेदान तो तेरा है और तेरे चूहेदान में ही यह चूहा आ फंसा है। यह शान्ता चूहे से बड़ा डरती है। उस दिन मरा हुआ चूहा देख कर बहुत डर गई! और यह चूहेदान घर से ले आई। आखिर चूहा इसमें आज आ ही गया है। एक बार घुस गया तो कैसे निकले। 'चू-चू' कर रहा है बिचारा। फंस गया है इसके चूहेदान में घुस कर," लिली बोली।

प्रभुदयाल ने घन्टी पर हाथ मारा और चपरासी अन्दर आ गया।

"यह चूहेदान बाहर ले जाओ," प्रभुदयाल ने कहा।

चपरासी चूहेदान उठा कर बाहर ले गया।

× × ×

दूसरे दिन जब प्रातःकाल प्रभुदयाल अपनी मेज़ पर आकर बैठा तो उसका कलेजा दहल गया। वह सुन्दर लड़की जो कविता दिखाने के बहाने उसे बीस हजार रुपयों का लिफाफा दे गई थी, एक भयङ्कर रूप धारण करके उसकी आँखों के सामने आने लगी।

"यह वेश्याएं अवश्य उसका सर्वनाश कर देंगी। उन्हें अवश्य नगर से निकाल देना चाहिए," प्रभु स्वतः बोल उठा।

क्रोध में आकर प्रभुदयाल ने अपनी कलम पकड़ी और लिखना आरम्भ कर दिया। लिखता गया और लिखता गया! जब वह लिखता था तो सारे नगर की वेश्याएं उसकी आँखों के सामने काली नागिनों का रूप धारण किये साँप की गति से चलती नजर आती थीं। वह कभी-कभी लिखते-लिखते डर सा जाता था।

ज़ोर से द्वार खुला और प्रभुदयाल के हाथ से कलम छूट कर काग़ज़ों पर गिर पड़ी। शान्ता अन्दर आ गई।

प्रभुदयाल ने फिर लिखना आरम्भ कर दिया।

शान्ता ने रोज़ की तरह पास आकर एक गुलाब का फूल प्रभुदयाल को भेंट किया।

"ठहर जाओ शान्ता, ज़रा लिख लेने दो।"

"क्या लिख रहे हैं आप?" शान्ता ने काग़ज़ पर झुक कर पढ़ना आरम्भ कर दिया।

प्रभुदयाल पत्रों पर अपने दोनों हाथ रख कर बोला, "शान्ता, तुम अपना काम करो।"

रूठ गई शान्ता और हाथ का फूल नोच-नोच कर वहीं भूमि पर फेंक दिया और बोली, "आप मेरे से छुपाते हो, सारे कागज़ों में वेश्या ही वेश्या लिखा है, अवश्य ही उस तरुण युवती को पत्र लिख रहे होंगे। हां, मेरा इससे क्या प्रयोजन। मैं कहाँ की प्राइवेट सेक्रेट्री," रूठ कर, घूम कर, शान्ता अपनी जगह पर जा कर बैठ गई।

प्रभुदयाल ने देखा शान्ता रूठ गई। झट से अपनी कुर्सी छोड़ कर शान्ता के पास चला गया। धीरे से उसको बगल से पकड़ कर बोला, "शान्ता, तनिक सी बात पर रूठ गईं! सब कुछ तुम्हारे पास ही टाइप होने को आना था।"

"नहीं! नहीं तुमने मेरा फूल क्यों फेंक दिया?"

"मैंने क्यों फेंका! फूल तो तुमने नोच डाला! कितना सुन्दर कोमल पुष्प था, जो तुमने नोच डाला! बड़ी पाषाण-हृदया हो तुम, शान्ता!"

"और तुम! कोई तुम्हें पुष्प दे और तुम लो नहीं! नाम को कहते हो प्राइवेट सेक्रेट्री और बातें सब छिपाते हो मुझसे," रूठ कर बोली शान्ता।

"अच्छा, उठो शान्ता! आओ तुम्हें दिखाऊं मैंने क्या लिखा है," कह कर उसने शान्ता की दोनों बगलों में हाथ डालकर उसको उठा लिया।

शान्ता उठ कर खड़ी हो गई और नोचे हुये फूल को फर्श से एक-एक बीन करके उसने फिर प्रभुदयाल के हाथ में दे दिया और बोली, "यह लो अपना फूल!"

"आ हा, हा कितनी सुगन्ध आ रही है इस पुष्प में से। कितना कोमल है यह फूल!"

"तो तुमने मेरा सुगन्धित पुष्प क्यों नहीं लिया ?" शान्ता ने पूछा ।

प्रभुदयाल ने धीरे से शान्ता के गाल पर उंगली मार कर कहा—"जब इससे भी अधिक सुगन्धित पुष्प मेरे पास विद्यमान् है तो मैं इस पुष्प का क्या करूँगा, मेरी प्यारी शान्ता !"

शान्ता ने मद में अपनी गर्दन हिला दी !

प्रभुदयाल ने अपना लेख पढ़ना आरम्भ कर दिया ! "यह देखो ! इस लेख का नाम मैंने रखा है, "लोगों को बिका दिया ।"

"जैसे तुम मुझे रोज़ बिका देते हो," बीच में बोल पड़ी शान्ता ।

"सुनो शान्ता ! काम के वक्त काम और खेल के समय खेल ।"

"आप कभी खेलते तो हैं नहीं, सारा दिन काम ही काम करते रहते हैं ।"

प्रभुदयाल ने अपने दोनों हाथ कागज़ों पर रख दिये । और रुष्ट होकर बोला—"अच्छा, बताओ तुम्हारे साथ क्या खेल खेलूं ?"

"खेल क्या खेलोगे ! कवि हो मुझे सामने बैठा कर कविता करो ! अच्छा एक बात पूछूँ बुरा तो न मानोगे ! यह 'रस और भौंरे' की कविता आपको सूझ कैसे जाती हैं ? कोई रसवाली तो तुम्हारे पास है नहीं ।"

"कविता के लिए किसी रसवाली का होना आवश्यक नहीं । यह तो प्राकृतिक है कि जब हम कभी बाग में जाते हैं, घूमते हैं तो उपवन में पुष्प भी होते हैं और भँवरे भी वहाँ आ जाते हैं ।"

"और सुगन्ध भी वहाँ आ जाती है !" झट से बोल उठी शान्ता।

"हाँ सुगन्ध भी वहाँ आ जाती है। तभी हम कविता बना लेते हैं।"

बाहर से द्वार खुला और लिली ने अन्दर प्रवेश किया।

शान्ता झट से बोल उठी, "देखा लिली, मैंने तुझसे कहा न था कि सम्पादक जी का मस्तिष्क सुगन्ध सूँघ-सूँघ कर तर रहता है और तू कहती थी कि सम्पादक जी 'वेश्या की खिड़की' लेख लिखने के लिए सारी रात वेश्याओं के कोठों पर घूमते रहे थे।"

शान्ता जो पहले सम्पादक जी से इतना डरती थी अब हर बात उनके ऊपर चढ़-चढ़ कर करती थी। उसने अपनी सुरभि फेंक कर सम्पादक को अपने बस में कर जो लिया था।

"तू जो कुछ कहती है ठीक कहती है," रूखा सा उत्तर देकर लिली अपने स्थान पर बैठ गई।

: १७ :

दूसरे दिन समाचार पत्र में प्रभुदयाल का लेख 'लोगों को बिका दिया गया' छप गया और लोगों में एक बार फिर खलबली मच गई।

कमेटी के मेम्बरों ने यह देख कर कि कहीं उसी दिन की तरह समूह आकर कमेटी को फिर ना घेर ले, तुरन्त ही मीटिङ्ग कर के मज़दूरों को वेश्याओं की खिड़कियाँ तोड़ने के लिए भेज दिया और खिड़कियाँ तुड़वा दीं। कुछ इक्की-दुक्की, ऐसी-वैसी, वेश्या को पकड़ कर भी वहाँ से निकल जाने के लिये कह दिया और उनसे बड़ा ही कठोर व्यवहार भी किया। सब को खूब तंग किया।

यह दशा देख कर नगर की सब वेश्याओं का खून सूख गया। चेहरे की लाली पीली पड़ गई कि खिड़कियाँ तो हमारी टूट गईं, अब हमको यह बाज़ार भी छोड़ देना पड़ेगा और कहीं स्थान न मिलने पर हमें काले-पानी ही भेज दिया जायेगा। हे भगवान्! सब याद करने लगीं भगवान् को और सबने मिल कर एक सभा बुलाई।

' अरी, यह प्रभुदयाल कहाँ से बला हमारे नगर में आ गई," एक ने कहा।

"अजी बड़ी जान, सत्यानाश करने आया है हम सबको यह निगोड़ा," दूसरी बोली।

"वल्लाह ! क्या ब्याहा है ?" एक बूढ़ी ने पूछा।

"अजी बड़ी जान, खुदा से डरो। ऐसे सत्यानाशी के साथ कौन विवाह करेगा। अपने घर की स्त्री को भी खुश नहीं रख सकेगा।"

"जीयो मेरी जान ! ऐसे ही तो हमारे बस में जल्दी आ जाते हैं।"

"नहीं बड़ी जान, अभी क्वारा है," एक ने कहा।

"हाय मेरा दिल ! अभी क्वारा है ! क्वारा !!"

"दिखा दो फिर उसे अलौकिक आनन्द !"

"बस में नहीं आता किसी के, बुलबुल एक बार गई थी सुगन्ध लगा कर, बीस हज़ार रुपया भी दे आई। पर वह बस में नहीं आया और उल्टा चिढ़ गया।"

"वाह री बुलबुल ! बलिहारी जाऊँ तेरे सौन्दर्य्य पर ! हज़ारों दीवाने एक नज़र देखने के लिए हज़ारों रुपये फेंक जाते हैं और तू एक क्वारे को बस में नहीं कर सकती। एक वक्र दृष्टि फेंक देती उस पर भी।"

"बड़ी जान, मैंने तो एक वक्र दृष्टि फेंक दी थी उस पर ! उसके हाथ पर अपना हाथ भी रख दिया था, शरीर की सब तारें हिला दी थी मैंने बड़ी जान उसकी। पर यह अम्मी जान 'चलो, चलो' करने लगी। गड़ा दी थी उसने मेरे सौन्दर्य्य पर,अपनी आखें मेरी आखों में !"

"और उसका परिणाम यह निकला कि दूसरे ही दिन उसने हमारे विरुद्ध एक और लेख लिख दिया। और हम सबको मार डाला," झट से बोल पड़ी अदा।

"देखो बड़ी जान, यह अदा मेरे साथ लड़ती है। यह बात ठीक नहीं," बुलबुल बोली।

अदा ने बड़ी जान के पास आकर उसके कान में कुछ कहा।

और बड़ी जान ने आँख फेंक कर दूर बैठी हुई कामिनी को देखा।

कामिनी दूर बैठी हुई अपने हाथी दाँत के सिगरेट-होल्डर से सिगरेट पी रही थी और एक फिल्मी पत्रिका के पन्ने, इधर उधर पलट रही थी।

"कामिनी", बड़ी जान ने पुकारा।

कामिनी ने पत्रिका से आँख उठा कर बड़ी जान की ओर देखा और बोली—

"हाँ, बड़ी जान।"

"अरी, मेरा खज़ाना इधर तो आ," बड़ी जान ने पुकारा।

कामिनी उठ कर, धुआँ छोड़ती हुई, बड़ी जान के पास आकर खड़ी हो गई।

बड़ी जान ने कामिनी के गर्दन तक कटे हुये बालों पर हाथ मारते हुये कहा, "मेरा खज़ाना, तू तो दिन-रात सोने का अंडा देने वाली मुर्गी ढूँढती रहती है और यहाँ यह सब मुर्गियाँ ही मार डालने वाला पैदा हो गया है।"

"इसमें मैं क्या कर सकती हूँ, बड़ी जान?" कामिनी ने कहा।

"मेरी जान, तेरे पास तो वह कला है कि जरा पैरों में घुँघरू बाँध कर, छम-छम कर दे तो हज़ारों दीवाने तड़प कर मर जाते हैं कि आवाज़ कहाँ से आ रही है। प्रभुदयाल क्या, देवता भी मोहित हो जाते हैं।"

"ना बड़ी जान ! मैं देवता को मोहित नहीं कर सकती और वह ठहरे प्रभु उन पर कौन नियन्त्रण पा सकता है ।"

"हाय, हाय मेरा खज़ाना ! हमारे प्रभु तो वह हैं जो हमारे पास आए, हँसे, खेले, जीये, और जिलाये !"

"पर बड़ी जान, प्रभुदयाल को कौन यहाँ ला सकता है ? सेठ जी ने स्त्री का अन्दर जाना मना कर दिया है । दरबान को आज्ञा दे रक्खी है कि सन्देहजनक स्त्री यदि दृष्टि पड़े तो तुरन्त गोली मार दो और अखबार में छपवा दो कि एक वेश्या को दफ्तर के बाहर मार डाला गया । इससे उनका सम्मान बढ़ता है ।"

"हाय ! हाय !! मेरा दिल, तू गोली खाने क्यों जाती है वहाँ ? यह अदा कहती है कि कुमार साहब प्रभु का बड़ा अभिन्न हृदय-मित्र है । कुमार ही एक दिन यहाँ ले आयेंगे ।"

कामिनी ने गर्दन मोड़ते और मुँह फेरते हुए कहा—"कुमार साहब भी आजकल सूखे हुए हैं । शराब छोड़कर चाय के लिए भी मुझसे पैसे मांगने आते हैं ।"

"सूखा हुआ तो हम हरा कर देंगे । काम हमारा कर दे । बस एक बार प्रभुदयाल को हमारे कोठे पर ले आये ।"

कामिनी जो पहले कटी-कटी सी बातें कर रही थी, बड़ी जान के मुँह से यह सुनकर अपनी आंखें चमकाती हुई, मुँह से सिगरेट का धुआँ उड़ाती हुई, बड़ी जान की ओर देखने लगी ।

"बस, हमारा काम कर दो । दस हजार तुम्हारे और दस हजार कुमार साहब के ।"

बड़ी जान के मुँह से यह सुनकर कामिनी हँस पड़ी । हँसते हुए उसने अपना लम्बा हाथी दाँत का सिगरेट-होल्डर उस बुढ़िया

बड़ी जान के मुँह में डाल दिया और बोली, "लो बड़ी जान, दम खींचो। तुम्हारा काम हो जायेगा। चिन्ता न करो।"

बड़ी जान ने हाथी दाँत के होल्डर को हाथ में लेकर दो तीन दम खींचे और सब वेश्याओं से बोली, "लाओ री, बीस हज़ार रुपया इकट्ठा करो।"

बड़ी जान के कहने की देर थी कि वेश्याओं ने गड्डियों की गड्डियाँ रुपया निकाल कर रखना आरम्भ कर दिया और क्षण में बीस हज़ार रुपया इकट्ठा हो गया।

थैली में रुपये डाल कर, बड़ी जान ने थैली कामिनी के हाथ में पकड़ा दी और कहा, "लो कामिनी, तुम अब अपना कामदेव का चक्कर चला दो। तुम्हारे ऊपर हमारा बड़ा दारोमदार है।"

कामिनी ने रुपयों की थैली हाथ में पकड़ ली और उछल कर बड़ी जान का मुँह चूम लिया और बोली, "चिन्ता न करो बड़ी जान, तुम्हारा काम हो जायगा।"

मीटिंग समाप्त हो गई और सब वेश्याएं अपने दिल में एक उम्मीद की तसल्ली लेकर अपने-अपने कोठों पर चली गईं।

कामिनी मोटर तेज़ी से चलाते हुए अपने बंगले पर पहुँच गई। दस हज़ार रुपये, अपनी तिजोरी में डाल कर, एक रेशम से भी मुलायम साड़ी पहनकर, बालों में सुगन्धित तेल लगाकर, कुमार साहब की दुकान पर पहुँच गई।

कुमार उदास मुँह बैठा हुआ कुछ खाते में लिख रहा था।

कामिनी धीरे से दुकान में घुस गई। कुमार को पता ही न चला। वह गर्दन नीचे किये हुए अपना खाता लिखता रहा। कामिनी ने जब काउंटर पर 'टक' 'टक' किया तो कुमार का ध्यान उधर गया।

जल्दी से खाता छोड़ कर, कुमार कामिनी के पास आकर खड़ा हो गया और बोला, "आज तो बड़े दिनों में आप का आना हुआ।"

"आपने ही दर्शन देने बन्द कर दिये। मुहब्बत भुला दी," कामिनी ने बड़ी नज़ाकत के साथ कहा।

"ज़रा आज-कल कुछ उदास-सा रहता हूँ।"

"उदास रहें तुम्हारे शत्रु," झट से कामिनी ने अपना एटेची केस खोला और उसमें से एक सौ का नोट निकाल कर चपरासी को बुलवा कर दिया और कहा, "लो एक ५५५ सिगरेट का डिब्बा ले आओ।"

कामिनी ने कुमार साहब को एटेची-केस में पड़ा हुआ रुपया दिखाने के लिए ही यह एटेची-केस खोला था।

कुमार कामिनी का एटेची-केस सौ-सौ रुपये के नोटों से भरा देखकर मुँह से पानी फेंकने लगा और बोला, "कामिनी, यह इतना रुपया कहाँ से ले आई ?"

"सब आपके लिए हैं," कामिनी ने अपनी आँखें मटकाते हुए कहा।

"मेरे लिये !" कुमार ने पूछा।

"हाँ आपके लिये," कामिनी ने कहा।

"हाँ, तनिक देखूं वह रेशमी साड़ियाँ," मुँह से धुआँ छोड़ते हुए साड़ियों की ओर घूम कर कामिनी ने कहा।

कुमार ने अल्मारियाँ खोल कर सब रेशम की साड़ियाँ कामिनी के सामने रख दीं।

कामिनी ने चुन-चुन कर दस पन्द्रह साड़ियाँ निकाल कर

अलग रख लीं और उधर कुमार साहब का मुँह सूख गया कि यह माल भी बिना रुपये के गया।

"कितने की हुई यह सब साड़ियाँ ?" कामिनी ने अपना एटेची-केस खोलते हुए पूछा।

कुमार ने सब साड़ियों को ऊपर नीचे करके कहा, "कोई पन्द्रह सौ की हुई।"

कामिनी ने झट सौ-सौ की नई-नई गड्डियाँ निकाल कर कुमार के सामने पटक दीं।

कुमार खुशी से कभी तो नोटों की ओर देखता और कभी कामिनी की आँखों को ओर।

"देख लो हिसाब ठीक है न ?" कामिनी ने फिर कहा।

"ठीक है कामिनी, मेरी प्यारी कामिनी !" कुमार ने कहा।

"कुमार, मेरे प्यारे कुमार ! तुमको नहीं मालूम कि मेरे हृदय में तुम्हारे लिये कितना प्रेम है।"

"जब तुम नहीं आते तो मेरा दिल मुर्झा जाता है।"

"मेरी आंखों में हर समय तुम्हारी ही सूरत घूमती रहती है।"

"कुमार !" कामिनी ने अपने होंठ कुमार के मुँह के सामने करते हुए कहा, "मेरा एक काम कर दो। मैंने भी तुम्हारा एक काम किया था।"

"तुम्हारा काम क्या, सिर कहो तो वह भी उतार कर रख दूँ," कुमार बोला।

"बात यह है कुमार साहब ! यह प्रभुदयाल जो आपका मित्र है न इसने इन बिचारी गाने-बजाने वालियों को बड़ा तंग कर

रक्खा है। बेचारी गा-बजा कर अपना पेट पालती हैं और वह उनको शहर से निकालने पर तुला हुआ है। रोज़ अपने समाचार पत्र में इनके विरुद्ध लिख देता है। बेचारी जायें तो कहाँ जायें?" कामिनी ने इस प्रकार बात बना कर कहा।

"बदमाश प्रभु को मैं ही रेल में लाया था। स्टेशन पर गठरी लटकाये खड़ा हुआ था। मैंने समझा चलो रास्ता अच्छा कट जायेगा। यहाँ आ कर सम्पादक बन बैठा। मुझे कहता था 'कंचन' लेने बम्बई जा रहा हूँ। 'कंचन' ही बना रहा होगा बदमाश," कुमार ने कहा।

"हम उसको 'कंचन' भी दे देंगे। तुम उसको एक बार हमारे कोठे पर ले आओ। ज़रा उसको भी गाना बजाना सुनवा दो," कामिनी ने आँख मारते हुए कहा।

"ले आऊंगा उसको, कोई मुश्किल काम नहीं," कुमार ने कहा।

"अच्छा, यह लो। गाने-बजाने वालियों ने दस हज़ार रुपये दिये है। पाँच हज़ार आप के लिए और पाँच हज़ार मेरे लिए," कामिनी ने कुमार से कहा।

"चिन्ता न करो,कामिनी। मैं अवश्य उसको लेकर आऊँगा," कुमार बोला।

"अच्छा, तो यह अपने पाँच हज़ार रुपये ले लो," कामिनी ने एटेची-केस खोलते हुए कहा।

"नहीं कामिनी, तुम अपने पास रख लो। जैसे रुपये तुम्हारे पास, वैसे मेरे पास। आवश्यकता पड़ने पर ले लूँगा।"

"कुमार, तुम कितने अच्छे हो," कह कर कामिनी ने अपने होंठ कुमार के होठों के साथ मिला दिये और कुमार की गर्दन में दोनों बाहें डाल दीं।

कुमार ने कामिनी को कस कर पकड़ लिया और कहा—"कामिनी, तुम मेरी जान हो। तुम्हारे लिए मैं अपनी जान भी दे देने को तैय्यार हूँ।"

"कुमार, मेरे प्यारे कुमार," कामिनी ने अपने बदन को कुमार के बदन से रगड़ते हुए कहा। थोड़ी देर इस प्रकार चापलूसी की बातें करके कामिनी चली गयी।

: १८ :

दूसरे दिन कुमार रात के बारह बजे अंधेरी रात में, जब सारा संसार सोया हुआ था, प्रभुदयाल को मोटर में बैठा कर वेश्याओं के कोठे पर ले गया।

दोनों मोटर में से उतर पड़े और ऊपर जाने लगे।

प्रभुदयाल ऊपर चढ़ने के लिए कुछ रुका और बोला, "क्या ऊपर चढ़ना होगा ?"

"हाँ प्रभु, ऊपर ही सब महिलाएं बैठी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं। कहो तो गोदी में उठा कर ले चलूं, तुम्हें।"

"नहीं-नहीं गोदी में उठा कर क्यों ले चलोगे," कह कर प्रभुदयाल कुमार के साथ ऊपर चढ़ गया।

कमरे में घुसते ही प्रभुदयाल दंग रह गया। कमरा क्या था एक स्वर्ग का नमूना था। मखमल से मुलायम कालीन बिछे थे: दीवारों पर बड़ी-बड़ी तस्वीरें—कुछ अच्छी, कुछ नंगी औरतों की वहाँ टंगी हुई थीं।

एक से एक सुन्दर रङ्ग-बिरङ्गी साड़ियाँ पहने, सोने के फैशनेबल आभूषणों से लदी जवान-जवान लड़कियाँ और बड़ी बड़ी उमर की औरतें, जिनके चेहरे की कृत्रिम लाली देख कर यह मालूम होता था कि जान अभी है, वहाँ खड़ी थीं।

प्रभुदयाल के अन्दर घुसते ही सबने बड़े अन्दाज़ के साथ दोनों हाथ जोड़ कर मुस्करा कर नमस्कार किया।

कुमार साहब प्रभुदयाल को लेजा कर एक सुन्दर स्थान पर अध्यक्ष की जगह पर बिठला दिया और उसके पास ही दो-चार जवान लड़कियाँ भी बैठ गईं। और अन्य सब महिलाएं उस बड़े कमरे में एक-एक फुट की दूरी पर दोनों ओर लाइन बना कर बैठ गईं।

"यह महिलाओं की बैठक है कि महारानियों की," प्रभुदयाल ने कहा।

खिल-खिला कर हंस पड़ीं सब वेश्याएं प्रभुदयाल की यह बात सुन कर!

"प्रभु जी, हमारी बैठक में सब अमीर घराने की औरतें हैं। हमारे पास खूब रुपया है," कुमार ने कहा।

"क्यों नहीं! रुपया संसार में सबसे बड़ी वस्तु है। पैसे के ही बल पर इतनी सजावट हो सकती है," प्रभुदयाल बोला।

प्रभुदयाल के मुंह से रुपये का नाम सुन कर एक बुढ़िया उठी और थाल में एक सौ का नोट रख गई।

दूसरी उठी और रुपये डाल गई।

इसी प्रकार बारी-बारी सब वेश्याओं ने किसी ने सौ, किसी ने दस, किसी ने पांच देकर, प्रभुदयाल के सामने रुपयों का ढेर लगा दिया।

"यह सब किस लिये हैं?" प्रभुदयाल ने कुमार ने पूछा।

"यह सब तुम्हारी भेंट है दोस्त! किसी दान-पुण्य के कार्य्य में लगा देना। मैंने कहा न था कि हमारी महिलाओं की बैठक बड़ी गम्भीर है।"

"वह कवयित्री जी प्रयाग से नहीं आईं ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"आती ही होंगी कवयित्री जी। लेने के लिए मोटर स्टेशन पर गई है," कुमार ने उत्तर दिया।

"तो इतनी देर में कोई नाच-रंग में दिल लगा रहे," एक बूढ़ी वेश्या बोल पड़ी।

और सामने से आधी नंगी, आधी ढकी हुई, एक पूर्ण युवती हाथ में डफ़ लिए, उछलती हुई, डफ़ बजाती हुई आ गई और गाने लगी—

"मद का रस तू पी भौंरे,
मद का रस तू पी।"

युवती नाचती जाती थी, और गाती जाती थी।

दूसरी ओर चार-पाँच लड़कियाँ मदिरा की सुराही लेकर सबके पात्रों में मदिरा भरती जाती थीं। वेश्याएँ मदिरा पी लेती थीं और लड़कियाँ और मदिरा डाल देती थीं। कुछ लड़कियाँ दूर खड़ी हुई चांदी का इत्रदान हाथ में लिये हुए चारों ओर वहाँ सुगन्ध उड़ा रही थीं। इस प्रकार उन वेश्याओं ने प्रभुदयाल की कामवासना को जागृत कर दिया।

"यह क्या गन्दी कविता बोल रही है यह लड़की," प्रभुदयाल ने कहा।

"मित्र, यह युवती कवि है। कहती थी कि हमने प्रभुदयाल की कविता के विरुद्ध एक कविता की रचना की है।"

"तो यह लड़की क्या कविता जानती है?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"हाँ।"

"इसको मेरे पास बुलवाओ! मैं इससे पूछता हूँ।"

"अभी बुलवाता हूँ, तुम जरा यह शर्बत तो पीयो ।"

तेज़ शराब का प्याला उठाकर कुमार ने प्रभुदयाल के होंठों के साथ लगा दिया ।

शराब प्रभुदयाल के गले से नीचे उतर गई । आँखें बदल गईं । वासना भड़क उठी और वह टकटकी बाँधकर उस गाती हुई लड़की को देखने लगा ।

कुमार ने ताली बजाई और वह लड़की नाच बन्द करके प्रभुदयाल के पास आकर गिर गई ।

"यह आप क्या कविता गा रही हैं ?"

"पहले आप यह रस तो पीजिए," दूसरा प्याला हाथ में उठाकर, आँखें मटकाते हुए उस लड़की ने प्रभुदयाल के पास चिपट कर कहा और अपने हाथों से प्याला प्रभुदयाल के होंठों के साथ लगा दिया ।

प्रभुदयाल उस लड़की की आँखों की ओर देखता हुआ प्याला गले से नीचे उतार गया । दो प्याले पीकर नशा हो गया और प्रभुदयाल भी बोल पड़ा, "मद का रस तू पी भौरे, मद का रस तू पी ।"

अब क्या था जवान लड़की ने अपने-आपको प्रभुदयाल की गोद में डाल दिया और प्रभुदयाल ने शराब के नशे में उसको अपने दोनों हाथों में जोर से कसकर दबा लिया और लड़खड़ाती हुई आवाज़ में बोला, "मद का रस तू पी, मीठा रस तू पी, पिला मुझे तू मीठा रस ।"

सब बूढ़ी औरतें वहाँ से उठ कर चली गईं । सब युवतियों ने अपने वस्त्र उतार दिए और अधनंगी हो गईं । हाथ में मदिरा का पात्र लेकर, एक युवती आती और प्रभुदयाल से कहती, "मद का रस तू पी भौरे, मद का रस तू पी ।"

प्रभुदयाल उनके हाथों से मदिरा ले-लेकर पी जाता।

इस प्रकार छै-सात मदिरा के प्याले पीकर प्रभुदयाल की मनोवृत्ति खो गई। वह वहाँ बकने लग गया।

युवतियाँ भी आ-आकर उसकी गोदी में गिरने लगीं और प्रभुदयाल भी उनको अपनी गोदी में ले-लेकर कसने लग गया।

छत के ऊपर, छै-सात फोटोग्राफरों ने, जो पहले से ही इन वेश्याओं ने बैठा रक्खे थे, अपना काम करना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार प्रभुदयाल की, इन लड़कियों के साथ शराब पीते हुए, खेलते हुए, लेटे हुए, सब फोटो ले लीं।

थोड़ी देर के पश्चात् सब लड़कियाँ प्रभुदयाल को वहीं छोड़ कर चली गईं और वह वहाँ कुत्ते की भाँति पड़ा रहा।

"उठो मित्र! वह कवयित्री जी प्रयाग से नहीं आई। सब महिलाएँ चली गईं! हम भी चलें," कुमार ने कमरे में घुसकर कहा।

"हैं! कवयित्री जी नहीं आई। चलो फिर हम भी चलें," प्रभुदयाल जो अभी नशे में था, और जिसका नशा अभी थोड़ा थोड़ा उतरा था, बोला।

कुमार ने प्रभुदयाल को अपना कंधा दिया और दोनों मित्र उतरकर मोटर में जा बैठे।

आधी रात की ठंडी-ठंडी हवा से प्रभुदयाल का नशा उतरा और वह कुमार से पूछने लगा—कहाँ गये थे हम, मित्र?"

"अरे मित्र, कहीं नहीं। महिलाओं का कवि-सम्मेलन था! वह साली प्रयाग से कवयित्री ही नहीं आई।"

"अब ना ले जाना कभी मुझे इन महिलाओं के कवि-सम्मेलन में; वहाँ एक महिला गा रही थी, "आ मद का रस तू पी भौरे, मद का रस तू पी।"

"अरे, वह बिचारी तो कुछ नहीं गा रही थी! वह साली कवयित्री ही नहीं आई प्रयाग से।"

"सब प्रतीक्षा करके अपने अपने घरों को चली गईं। तुम्हारे सिर में वैसे ही कुछ दर्द-सा मालूम होता है। लो यह थोड़ी-सी ऐस्प्रो! खा लो," कुमार ने अपनी जेब से ऐस्प्रो निकालकर कहा।

"नहीं, अब मस्तिष्क ठीक है," प्रभुदयाल ने कहा।

इतनी देर में मोटर प्रभुदयाल के घर पर पहुँच गई। और प्रभुदयाल मोटर में से उतरकर आहिस्ता-आहिस्ता चोरों की भाँति अपने सोने के कमरे की ओर जाने लगा!

पीछे से किसी ने बत्ती जला दी! कंचन सामने आकर खड़ी हो गई।

"कहाँ गये थे आधी रात में आप?" कंचन ने पूछा।

"कहीं नहीं, कुमार साहब जरा महिलाओं के कवि सम्मेलन में ले गये थे। वह साली प्रयाग से कवयित्री ही नहीं आई," कहते कहते प्रभुदयाल अपनी खाट पर गिर पड़ा और सो गया।

"इतनी रात में कौन-सी महिला थी, जो कवि-सम्मेलन कर रही थी," कंचन ने पूछा।

प्रभुदयाल तो गिरते ही खो गया था, कुछ न बोला।

"तुम्हारे मुँह से तो मदिरा की बू आ रही है। चोरों की भाँति पता नहीं कहाँ चले जाते हो," कंचन ने कहा।

प्रभुदयाल कुछ न बोला। वह तो वहाँ नशे में पड़ा था। कुछ हिला न डुला।

कंचन बत्ती बुझाकर चली गई और अपने कमरे में आकर सो गई।

: १६ :

प्रातः उठकर जब सेठ जी ने बिस्तरे में चाय का प्याला पोते पीते प्रातः के समाचार पत्र पर दृष्टि दौड़ाई तो देख कर दंग रह गये। आंखों के सामने अंधकार घिर-घिर कर आने लगा, और दिल में घबराहट हो गई, प्रभुदयाल को नंगी वेश्याओं के साथ लेटे हुए शराब पीते हुए चित्रों को वहाँ छपे हुए देख कर!

चाय का प्याला पीते-पीते हाथ से छूट कर नीचे गिर पड़ा और सेठ जी बिस्तरे से उठ कर जल्दी-जल्दी दूसरे पत्रों को देखने लगे। सब पर वही चित्र छपे पड़े थे।

"यह क्या! प्रभुदयाल वेश्याओं के साथ इस प्रकार! यह क्या हुआ! मेरा तो सर्वनाश हो गया। अत्याचार हो गया," पीट लिया सेठ जी ने अपना माथा और रोते हुए बोले, "कंचन।"

कंचन अपने पिता जी की आवाज़ सुन कर दौड़ी-दौड़ी आई और बोली, "क्या हुआ पिता जी?"

"कंचन, मेरा तो सर्वनाश हो गया।"

"क्या हुआ पिता जी?" कंचन ने फिर पूछा।

"बेटी, यह अखबार देख।"

कंचन ने जल्दी-जल्दी अखबारों के पत्रे उलट कर देखा तो उसकी चीख़ निकल गयी—प्रभुदयाल को नंगी वेश्याओं के साथ देख कर!

"प्रभु ही है न ?" पूछा सेठ जी ने।

"हाँ, पिता जी !" कंचन ने रोते-रोते कहा।

"यह कैसे हो गया ? बेटी, वह तो ऐसा न था ! इस समय क्या कर रहा है ?"

"सो रहे हैं।"

"सो रहा है, तो ठीक है। बेटी ठीक है। मेरे कफ़न की भी तैय्यारी करो।"

"ऐसा न कहो पिता जी।"

"मेरी बेटी, आज नगर में, घर-घर में यह अखबार घूम जायेंगे ! और सब के मुँह में केवल यही चर्चा होगी। लोग कहेंगे, सेठ बुलाकीराम ऐसे आदमी थे। दुनिया कहेगी सेठ बुलाकी राम भी लुच्चा है, बदमाश है, रन्डीबाज है," कहते-कहते सेठजी धड़ाम से फर्श पर गिर पड़े।

अपने पिता को इस प्रकार गिरते देख कर कंचन की चीख़ निकल गई ! वह जोर-जोर से रोने लगी और कहने लगी, "पिता जी, आप को क्या हो गया ?"

रोने का शब्द सुनकर प्रभुदयाल भी जाग पड़ा। कमरे में सेठ जी को फर्श पर गिरा देख कर और कंचन को उनके पास रोते देख कर वह घबरा कर कंचन से पूछने लगा,—"क्या हुआ कंचन, सेठ जी को ?"

"क्या हुआ सेठ जी को, अब मेरे से पूछते हो," रोते-रोते बोली कंचन।

"और किससे पूछूं, कंचन," प्रभुदयाल भी अपनी आंखों से आँसू निकाल कर बोला।

"उनसे पूछो !" कंचन फर्श पर गिरे हुए अखबारों की ओर संकेत करके बोली।

"हाँ, उनसे पूछो ! तुमने तो हमारा सर्वनाश ही कर दिया," ज़ोर-ज़ोर से रो कर कंचन फिर बोली।

प्रभुदयाल समझ न सका क्या बात है और धीरे-धीरे अखबारों को उठा कर देखने लगा।

घबरा गया प्रभुदयाल अपनी फोटो नंगी लेटी हुई वेश्याओं के साथ देख कर !

"देख लिया," कंचन रोती हुई बोली।

प्रभुदयाल अब समझ गया था कि उसको फँसाने के लिये लोगों ने कैसा षड़यन्त्र रचा है। विचारा चुपचाप वहाँ अखबार पकड़े बैठा रहा, सोचता रहा, कुछ बोल न सका।

"तुमने हम सबको मार डाला," कह कर कंचन ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

"कंचन," अपने को संभाल कर प्रभुदयाल बोला,—"यह तुम क्या कर रही हो। सेठ जी तो अचेत पड़े हैं और तुम उनके पास बैठी रो रही हो। जल्दी से डाक्टर को बुलवा कर उनको होश में लाना चाहिये ! जो होना था सो हो गया," कह कर प्रभुदयाल वहाँ से उठ खड़ा हुआ और जल्दी से टेलीफ़ून करके डाक्टर को तुरन्त आने के लिये कहा।

डाक्टर मोटर में जल्दी ही आ पहुँचा।

सेठ जी को बेहोश पड़े देख कर डाक्टर भी बोल उठा— "अरे भाई प्रभुदयाल ! यह तुमने क्या कर दिया ? क्या यह सब फोटो जो आज समाचार पत्रों में छपे हैं, तुम्हारे ही हैं।"

"हाँ डाक्टर, वह सब फ़ोटो मेरे ही हैं। पर तुम उसमें दिलचस्पी ना लेकर मरीज़ की तरफ ध्यान दो," प्रभुदयाल ने क्रोध से कहा।

"ठीक है, परन्तु मैं तो केवल रोगी के सचेत होने के कारण से ही तुमको पूछता हूँ, सम्पादक जी," डाक्टर ने भी प्रभुदयाल को चिड़ाने वाली भाषा में कहा।

"हाँ, डाक्टर साहब, चाय पीते-पीते अख़बार देखकर संज्ञा-हीन होकर गिर पड़े हैं। देखो डाक्टर, इनका दिल बड़ा ही कमज़ोर है," रोते हुए कंचन ने कहा।

प्रभुदयाल भी अपने मुँह पर हाथ रख कर रोने लगा।

"रोओ मत," डाक्टर ने अपना स्टैथस्कोप सेठ जी की छाती पर लगा कर कहा—"दिल ठीक काम कर रहा है। इनको चारपाई पर लिटा दो।"

एक ओर से प्रभुदयाल ने और दूसरी ओर से कंचन ने सेठ जी को उठा कर चारपाई पर लिटा दिया।

"मैं इन्जेकशन लगा देता हूँ। ठीक हो जायेंगे, घबराने की कोई बात नहीं।" डाक्टर ने झट से इन्जेकशन बना कर सेठजी के शरीर में चुभा दिया और कहा—"सेठजी के पास कोई किसी भी प्रकार की आवाज़ ना पैदा करें। घबराने की कोई बात नहीं। एक घंटे के बाद टेलीफोन पर मुझको खबर दे देना," कह कर डाक्टर चला गया।

सेठ जी आराम से लेटे रहे।

कंचन और प्रभुदयाल भी वहाँ कुर्सियों पर आँखें नीचे किये हुये बैठे रहे। कभी-कभी प्रभुदयाल आँख उठा कर कंचन की ओर देख लेता था और कभी-कभी कंचन भी आँख उठा कर प्रभुदयाल

की ओर देख लेती थी। जब कभी दोनों की आँखें टकरा जाती थीं तो उदासी में वह दोनों सूखे आँसू बहा देते थे।

कंचन सेठ जी की ओर देखती ही जा रही थी और चुपचाप रोती जाती थी।

प्रभुदयाल ने जो आँख उठा कर देखा तो कंचन की गालें रो-रो कर गीली हो गई थीं।

"कंचन, तुम रो रही हो। मुझसे यह देखा नहीं जाता। मैं जाता हूँ?" कहकर प्रभुदयाल वहाँ से उठकर अपने कमरे में चला गया।

कंचन प्रभुदयाल को इस प्रकार जाते देखकर उसके पीछे-पीछे आ गई। प्रभुदयाल अपने कमरे में जाकर फूट-फूट कर रोने लग गया।

"आप क्यों रोते हैं, प्रभु जी?" कंचन ने अपने आंचल से प्रभुदयाल के आँसू पोंछते हुए कहा।

"नहीं, मैं यहाँ से चला जाऊँगा। मेरे ही कारण यह सब बदनामी आपको उठानी पड़ी है।"

"ऐसा न कहो, प्रभु! पिता जी जल्दी ही ठीक हो जायेंगे," कंचन ने प्रभु के समीप होते हुए कहा।

"कंचन" कमरे में से धीरे से आवाज़ आई।

कंचन और प्रभु दोनों उठ कर, दौड़ते हुए कमरे में चले गये। सेठ जी ने आँखें खोली हुई थीं।

प्रभुदयाल को देखकर सेठ जी बोले, "प्रभुदयाल, यह तुमने क्या किया?"

"सेठ जी, डाक्टर साहब कह गये हैं कि आपको आराम करने दिया जाय," प्रभु बोला।

"अरे मेरा डाक्टर तो तू था ! तूने मेरा सर्वनाश कर दिया," सेठ जी चीख उठे ।

"पिता जी !" कंचन आगे बढ़ कर बैठ गई अपने पिता जी के पास ।

"अरी बेटी, मैं क्या सोचता था और क्या हो गया । तू ही इसको लाई थी ? मेरा यह सब कुछ तुम दोनों का ही था । पर अब क्या रहा ? पलड़ा पलट गया । जिसका मुझे डर था वही हुआ ।"

"पिता जी, आप घबराएं नहीं । प्रभुदयाल फिर से बिगड़ी हुई समस्या को ठीक कर लेंगे," कंचन ने कहा ।

"अब बिगड़ी हुई समस्या को क्या ठीक करेगा, खाक । जब एक बार रंडी-बाज़ार में घुस गया । उनके साथ शराब पी आया । नाच देख आया और उनके साथ लेट आया," ज़ोर-ज़ोर से कहते-कहते सेठ जी तकिये पर सिर फेंक कर लेट गये ।

उच्च स्वरों का आदान-प्रदान सुनकर, द्वार पर से डाक्टर जल्दी-जल्दी अन्दर आया और आते ही प्रभुदयाल से बोला—

"तुमको शर्म नहीं आती इतने बड़े सम्पादक होकर ज़ोर-ज़ोर से बातें कर रहे हो । उनके दिल पर चोट पहुंची है और तुम उनके साथ लड़-झगड़ रहे हो । निकल जाओ तुम दोनों, कमरे से बाहर," कहकर डाक्टर ने उन दोनों को कमरे से बाहर निकाल दिया और कमरा अन्दर से बन्द कर लिया ।

"देखा आपने डाक्टर साहब," सेठ जी बोले ।

"हाँ देखा, सेठ जी । बात ही क्या है । छोटी सी बात है," डाक्टर ने कहा ।

"यह छोटी-सी बात है ? घर-घर में इसकी चर्चा हो रही होगी ।"

"वाह सेठ जी !" डाक्टर सेठ जी की नाड़ी अपने हाथ में

पकड़ कर बोला—"लोग तो कहते हैं प्रभुदयाल बहुत ही शरीफ आदमी है। यह तो उसको फंसाने के लिये सब जाल फेंका गया है। सुना है कि कोई प्रभुदयाल का मित्र कुमार-कुमार है। वह ही प्रभुदयाल को किसी प्रकार बहका कर ले गया था।"

"पर दुनिया अब इस बात को नहीं मानेगी, डाक्टर साहब," सेठ जी बोले।

"सब ठीक हो जायेगा, सेठ जी चिन्ता न करें, ज़रा दिल मज़बूत करें। हाँ तनिक छाती खोलिये तो इंजेक्शन लगा दूँ।"

डाक्टर ने इंजेक्शन लगा दिया और कहा, "सेठ जी, एक-दो दिन आराम करें।"

"बस, अब आराम ही आराम है," कहते-कहते सेठ जी सोने लगे।

डाक्टर ने दरवाज़ा खोला, तो कंचन और प्रभुदयाल दोनों बाहर खड़े इंतज़ार कर रहे थे।

"देखो प्रभुदयाल! कंचन तो रही सेठ जी की बेटी। तुम तो अपना दिल कड़ा करके दिमाग़ से काम लो। अरे, इतने बड़े सम्पादक हो," डाक्टर ने कहा।

"मैं भी तो सेठ जी का बेटा हूँ।"

"ना ना ऐसा ना कहो नहीं तो कंचन रुष्ट हो जायेगी। हम तुम्हारी और कंचन की शादी के बारे में ही तो अन्दर सेठ जी से बातें कर रहे थे। तनिक सम्भल कर काम लो जैसा मैं कहूँ वैसा करते जाओ," कहकर डाक्टर चला गया।

कंचन और प्रभुदयाल ने भीतर घुस कर देखा; सेठजी आराम से लेटे थे।

दोनों अपने कमरे में चले गये।

इसी प्रकार सेठ जी की बीमारी के दो-तीन दिन बीत गये।

: २० :

सारे नगर मे यह बात आग की भाति फैल गई। लोग कहने लगे—"यह समाचार पत्र वाले बदमाश हैं। लुच्चे है। धोकेबाज़ है, बहकाते हैं। कहते है कि हम जनता के सच्चे सेवक है, पर करते हैं वह जिससे रुपया ऐंठा जा सके। ये सब कुछ रुपया कमाने का धन्धा बना रक्खा है। यह अख़बार झूठा है।"

लोगों ने वह पत्र पढ़ना छोड़ दिया। पत्र की बिक्री नीचे गिरते गिरते बीस हज़ार से दो हज़ार रह गई। तनख्वाहे न बटीं। नौकर नौकरी छोड़-छोड़ कर जाने लगे। मशीन-मैन मशीने खाली देख कर निकाल दिये गये। शान्ता भी अपना चूहेदान लेकर चली गई। पत्र-संचालकों ने सारा समाचार आकर सेठ जी को सुना दिया और बता दिया कि पत्र को पचास हज़ार की हानि हो गई है।

"सेठ जी तो पचास हज़ार रुपये का प्रबन्ध करना है," संचालकों ने कहा।

"अरे भाई, मैं क्या कर सकता हूँ। मैं तो बीमार पड़ा हूँ," सेठ जी ने कहा।

"सेठ जी, तो फिर हम मीटिंग करके आपको पत्र से अलग कर रहे है-। आपके ही कारण से हम को यह हानि हुई है। आप ही प्रभुदयाल को यहाँ लाये थे।"

"अरे भाई ! मैं तो आप ही अलग हुआ जा रहा हूँ," खाँसते-खाँसते सेठ जी बोले—"दुनिया से दूर, बिलकुल दूर !

"अच्छा सेठ जी फिर हम लोग चल दे ?"

कह कर डायरेक्टर लोग अपने मोटे-मोटे जूते 'कच्च' 'कच्च' करते हुये वहाँ से चले गये।

उस समय जब पाँच हजार से पचास हजार बिक्री पत्र की हो गई थी तो कोई न बोला था। सबने पोली-पोली मिठाइयाँ खालीं। और अब जब पत्र की बिक्री दो हजार रह गई तो दोष केवल एक ही का ठहराया गया। एक ही बदमाश बना।

सच कहा है—

"पाप का रुपया आता रहने से पापी लेने रहते है और जब पाप का रुपया चला जाता है तो पापी लड़ पडते हैं। यही तो आधुनिक संसार है। यही तो बिगड़ी हुई समस्या है।

महालक्ष्मी भी कहती है—

"तू मेरे वास्तविक स्वरूप को समझ। जो मुझे प्यार करते हैं, मेरी पूजा करते है, अपने मन मे शान्ति और सन्तोष रखते हैं उनके पास मैं हर समय रहती हूँ और जो मुझे ठुकराते हैं, मुझको अपने हाथ में लेकर जो अत्याचार करते है, वेश्याऐ खरीदते हैं, शराब मे फूकते हैं और जो मुझको पाने के लिए दर-दर भटकते है, उनके पास भी मैं जाती अवश्य हूँ।"

"किस लिये महालक्ष्मी ?"

"उनको अपना वास्तविक रूप दिखाने के लिये उनके पास मैं जाती हूँ और इसी प्रकार उनके हाथों से चली जाती हूँ जिस प्रकार उन्होंने मुझे उठाया था।"

"महालक्ष्मी, तू ऐसा क्यों करती है ?"

"उनको अपना वास्तविक स्वरूप दिखाने के लिये।"

"महालक्ष्मी तेरा वास्तविक स्वरूप क्या है?"

"मैं जनता की सेविका हूँ। नौकर हूँ। संसार के काम सरल करने का केवल एक साधन मात्र हूँ और उन लोगों के पास मैं हर समय जाती हूँ जो मुझे प्रेम करते हैं। जो मेरे साथ अत्याचार करते हैं, जो मेरा निरादर करते हैं उनके हाथ में एक बार जा कर फिर कभी नहीं जाती हूँ जब तक कि वह मुझे फिर प्यार नहीं करने लगते।

"महालक्ष्मी, तुम्हें प्रणाम है? तुम धन्य हो! तुम इस मानव संसार में जितनी भी जल्दी हो अपना प्रताप फैला कर अति शीघ्र ही लौकिक प्राणियों को अपना वास्तविक स्वरूप दिखाओ। इस समय तुम्हें पाने के लिए घोर अत्याचार हो रहे हैं। देश देश से लड़ रहे हैं। बाप बेटे से लड़ रहा है। भाई भाई का गला घोटने के लिए तैय्यार रहता है।"

"तो वापिस कर दो यह सब धन जो तुमने झूठे साधनों से प्राप्त किया है और मुझे प्यार करो, मेरा वास्तविक स्वरूप समझो! मैं तुम्हारे पास अवश्य आ जाऊँगी", कह कर लक्ष्मी अन्तर्धान हो गई।

"महाप्रभु, उठो सवेरा हो गया।"

प्रभुदयाल ने आँखें खोली तो कंचन सामने खड़ी थी।

"कंचन!" प्रभुदयाल ने पुकारा।

"मेरे प्रभु" कंचन बोली!

"कंचन" हाथ पकड़ कर खींच लिया प्रभुदयाल ने कंचन को अपने पास और बोला—"कंचन, मैं आज बहुत प्रसन्न हूँ।" कह कर प्रभुदयाल ने कंचन को अपने दोनों हाथों में कस लिया

और उसकी छाती पर अपना सिर रख कर उसको अपनी गोदी में लिटा कर बोला, "कंचन ! मैं आज बहुत प्रसन्न हूँ, बहुत प्रसन्न हूँ ! कंचन, मैं बहुत प्रसन्न हूँ !"

× × ×

प्रभुदयाल की माँ ने जब समाचार पत्रों में अपने बेटे को नंगी वेश्याओं के साथ देखा तो उसके शरीर का खून मास के अन्दर जम गया। खटोले पर उदास बैठ कर लगी अपने आप से बातें करने—

"मैंने क्या किया ? बेटे को क्यों भेजा, परदेश,नौकरी करने ? वहाँ जाकर वह खराब हो गया।"

फिर वह बुढ़िया अख़बार में तसवीरों को देख कर फूट-फूट कर रोने लगी।

"मेरा बेटा ऐसा नहीं था। मेरा बेटा ऐसा नहीं था फिर यह कैसे हुआ ?"

बेटा, तुम वहाँ पर यह क्या कर रहे हो ? तुम मेरे पुत्र हो कर वेश्याओं के साथ। नहीं बेटा, तुम मेरे पास शीघ्र आ जाओ। मुझे कोई आवश्यकता नहीं रुपये की !" कह कर वह बुढ़िया फूट फूट कर रोने लगी।

रोते-रोते जब उसकी सूखी-सूखी गालें भीग कर तर हो गईं, तो वह रोती-रोती खटोले पर से उठी और कलम दवात और कागज़ लेकर बैठ गई। अपने पुत्र को पत्र लिखने लगी।

उसने रो-रो कर अपने पुत्र को तुरन्त वापिस आ जाने के लिए लिख दिया और साथ ही यह भी लिख दिया कि यदि वह दो दिन के भीतर ही उसके पास नहीं आ जायेगा तो वह अपनी माँ को मरा पायेगा।

कंचन और प्रभुदयाल एक दूसरे की गर्दन में बाहें डाले हँस रहे थे और चाय पी रहे थे।

"पोस्टमैन," बाहर द्वार पर किसी ने आवाज़ लगाई।

कंचन प्रभुदयाल की गर्दन से अपनी बाहें खींच कर बाहर गई और पोस्टमैन ने अपना चश्मा ठीक करते हुए चिट्ठियों में से एक लिफाफ़ा निकाल कर कंचन के हाथ में दे दिया।

"कौन था कंचन ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"यह आप के नाम की चिट्ठी है," कंचन ने लिफ़ाफ़ा प्रभुदयाल के हाथ में देते हुए कहा।

"यह तो मेरी माँ की चिट्ठी मालूम पड़ती है," प्रभुदयाल ने कहा।

"देखो पढ़ कर सब कुशल तो है ?" कंचन ने कहा।

प्रभुदयाल चिट्ठी पढ़ता गया और पढ़ता गया। पढ़ते-पढ़ते उसकी दोनों आँखों से दो बून्दें निकल आयीं। क्यों नहीं, पत्र में माँ का हृदय जो बोल रहा था।

"क्या हुआ, प्राणनाथ ?" कंचन ने घबराते हुए पूछा।

"कंचन, मुझे वापिस जाना होगा। माँ का दिल रो रहा है। समाचार-पत्रों में नंगी वेश्याओं के साथ उसने मेरी फोटो को देख लिया है। माँ लिखती है कि अगर दो दिन के अन्दर-अन्दर में वहाँ न पहुँच गया तो उसे मरा हुआ पाऊँगा। कंचन, मुझे बहुत जल्द जाना होगा," रोते-रोते माँ की चिट्ठी कंचन के हाथ में देकर प्रभुदयाल उठ खड़ा हुआ।

"प्राणनाथ ! मेरा भी, दिल अब यहाँ नहीं लगता। जब से पिता जी की मृत्यु हुई है यह नगर मुझे खाने को दौड़ता है।"

दोनों ने शीघ्रतापूर्वक जाने की तैय्यारियाँ कीं। दोनों जाकर गाड़ी में बैठ गये।

द्वार में घुसते ही प्रभुदयाल ने अपना बकसा भूमि पर रख दिया और अपनी बूढ़ी माँ से, जो कमरे में खटोले पर लेटी सिसकियाँ ले रही थी, बोला—

"माँ! मैं आ गया। तेरे लिए कंचन लाया हूँ।"

पुत्र की आवाज़ कान में पड़ते ही माँ ने दौड़ कर अपने पुत्र को दोनों हाथों से कस कर अपनी छाती से लगा लिया और बोली, "बेटा, तू आ गया! बेटा, तू आ गया!"

"माँ! मैं तेरे लिए 'कंचन' लाया हूँ। देखो वह बाहर खड़ी है।"

कंचन ने, जो आधी दरवाज़े के बाहर और आधी दरवाज़े के अन्दर खड़ी थी, अन्दर आकर माँ को नमस्कार किया और माँ के चरणों में गिर गई। माँ ने वधू के सिर पर स्नेह का हाथ फेरा और बोली, "बेटा, मुझे यही चाहिए थी।"

दोनों माँ के सामने खड़े हो गये।

"बैठो, बेटा! यात्रा से आए हो, मैं तुम्हारे लिए दूध गर्म कर के लाती हूँ।"

झट माँ रसोई घर में चली गई और दूध गर्म करके दो गिलासों में ले आई। और उन दोनों के सामने रख दिया।

दोनों दूध पीने लगे।

माँ फिर रसोई-घर में चली गई।

एक लोहे का मोटा हथौड़ा हाथ में लेकर वह ६० वर्ष की बुढ़िया जल्दी-जल्दी ज़ोर-ज़ोर से रसोई में मिट्टी के बने हुए चूल्हे को तोड़ने लगी। तोड़ती गई और तोड़ती गई। आज उसके कमज़ोर हाथ तेज़ी के साथ चल रहे थे जैसे किसी जवान के!

'ठा', 'ठा', 'ठा', 'ठा', 'ठा',

"यह क्या हो रहा है ?"

प्रभुदयाल उठ कर बाहर आया और रसोई-घर के पास खड़ा हो कर माँ को इस तरह ज़ोर-ज़ोर से चूल्हा तोड़ते हुए देखकर घबरा कर बोला, "माँ, तू यह क्या कर रही है ?"

"कुछ नहीं बेटा।"

"चूल्हा क्यों तोड़ रही है ?"

"बेटा, चूल्हे की तू चिन्ता न कर, बहू फिर बना लेगी। तू जा कर बहू के साथ दूध पी।"

प्रभुदयाल चला गया।

चूल्हा जब टूट-फूट कर मिट्टी-मिट्टी हो गया तो बुढ़िया माँ वहाँ एक बड़ी भारी पत्थर की शिला को हटाने में लग गई। शिला बहुत भारी थी पर वह साठ वर्ष की बुढ़िया भी अपना सारा ज़ोर लगा कर उसको परे हटा रही थी। शिला हटाते-हटाते कई बार वह विचारी गिर भी पड़ी।

उसने अपनी समस्त शक्ति लगा कर अपने वृद्ध हाथों से काँपते-काँपते शिला उठा कर परे फेंक दी।

शिला के गिरते ही एक ज़ोर का धमाका हुआ। प्रभुदयाल और कंचन बैठे-बैठे डर गये। शिला हटा कर बुढ़िया माँ ने वहाँ कुछ पृथ्वी खोदी और अन्दर से एक लोहे का कलसा निकाला।

कलसा हाथ में पकड़ते ही उस साठ वर्ष की बुढ़िया का चेहरा खुशी से खिल उठा। अन्दर धसी हुई सूखी गालों पर मुस्कराहट आ गई। आँखें बिजली के लट्टू के समान चमकने लगीं।

कलसा बग़ल में दबा कर वह साठ वर्ष की बुढ़िया कमरे में आ पहुँची।

कलसे में से एक सोने की मोहरों का हार निकाल कर उसने हँसते-हँसते बहू के गले में डाल दिया और सारा कलसा धीरे-धीरे उन दोनों के सामने उड़ेल दिया।

कलसे के बीच में से, सोना, चाँदी, मोहरें, रुपये और पैसे सब निकलते गये और प्रभुदयाल खड़ा होकर हँसती हुई आँखों से माँ की ओर देखने लगा। उसको ऐसा लगा जैसे महालक्ष्मी अपने हाथ में चंगेज़ लिए खड़ी वहाँ अशर्फियाँ उंड़ेलती जा रही है। प्रभु को ऐसा लगा जैसे महालक्ष्मी ने वहाँ अशर्फियाँ उंड़ेल-उंड़ेल कर एक ढेर लगा दिया है। अशर्फियों का एक पहाड़ बना दिया है।

"माँ! तू यह सब 'कंचन' कहाँ से लाई है?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"बेटा, यह सब तेरी "कंचन" के लिये है। बहू आये तो 'कंचन' अपने आप ही आ जाती है।" फिर माँ पास खड़ी बहू के सिर पर आशीर्वाद का हाथ फेर कर अपने बेटे से बोली—

"बेटा, तू अपनी 'कंचन' को समझ, यही तेरी स्त्री है। भारतीय संस्कृति में स्त्री को ही लक्ष्मी का रूप दिया है, स्त्री को ही यह, उच्च स्थान मिला है। कंचन को पाने के लिए, लक्ष्मी की ही पूजा की जाती है।"

"जो मनुष्य अपनी स्त्री से प्रेम करते हैं और उसी से तृप्त रहते हैं, वह व्यभिचार की ओर कभी नहीं जाते, झूठे साधनों द्वारा कंचन को नहीं बटोरते। जिस आश्रम में, जिस समाज में, जिस देश में, स्त्री का अपमान होता है, व्यभिचार होता है, वह आश्रम

बन्द हो जाता है, वह समाज उजड़ जाता है, वह देश लड़ाई-झगड़े की ओर अग्रसर हो जाता है। बेटा, मैं अपने विश्वास व दृढ़ अनुभव से कहती हूँ कि संसार में स्त्री की पूजा ही संसार के सब दुःखों को हर लेती है। यह स्त्री ही संसार की जननी है। यह एक महाशक्ति है; इसको तू समझ।"

"बेटा, यही तेरी तृप्ति है, यह ही तेरी बुद्धि है, यही तेरी साधना है, यही तेरा ध्येय है, और यही तेरी 'कंचन' है।"

प्रभुदयाल ने पास खड़ी कंचन को अपने पास खींच लिया और हँसते-हँसते बोला—

"माँ, यह 'कंचन' तो मैं तेरे लिए लाया हूँ।"

"हाँ, बेटा, मुझे भी यही 'कंचन' चाहिए थी।"

—: कंचन :—